thearyasamaj.org

रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17 आर्य मर्यादा साप्ताहिक आर. नम्बर 26281/74

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

15 व 22 फरवरी 2015

मूल्य : 10 रु.	
वर्ष: 71	अंक : 45-46
सृष्टि संवत् 1960853115	
15 व 22 फरवरी 2015	
दयानन्दाब्द 189	
वार्षिक : 100 रू.	
आजीवन : 1000 रू.	
दूरभाष : 2292926, 5062726	

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

जालन्धर

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व विशेषांक

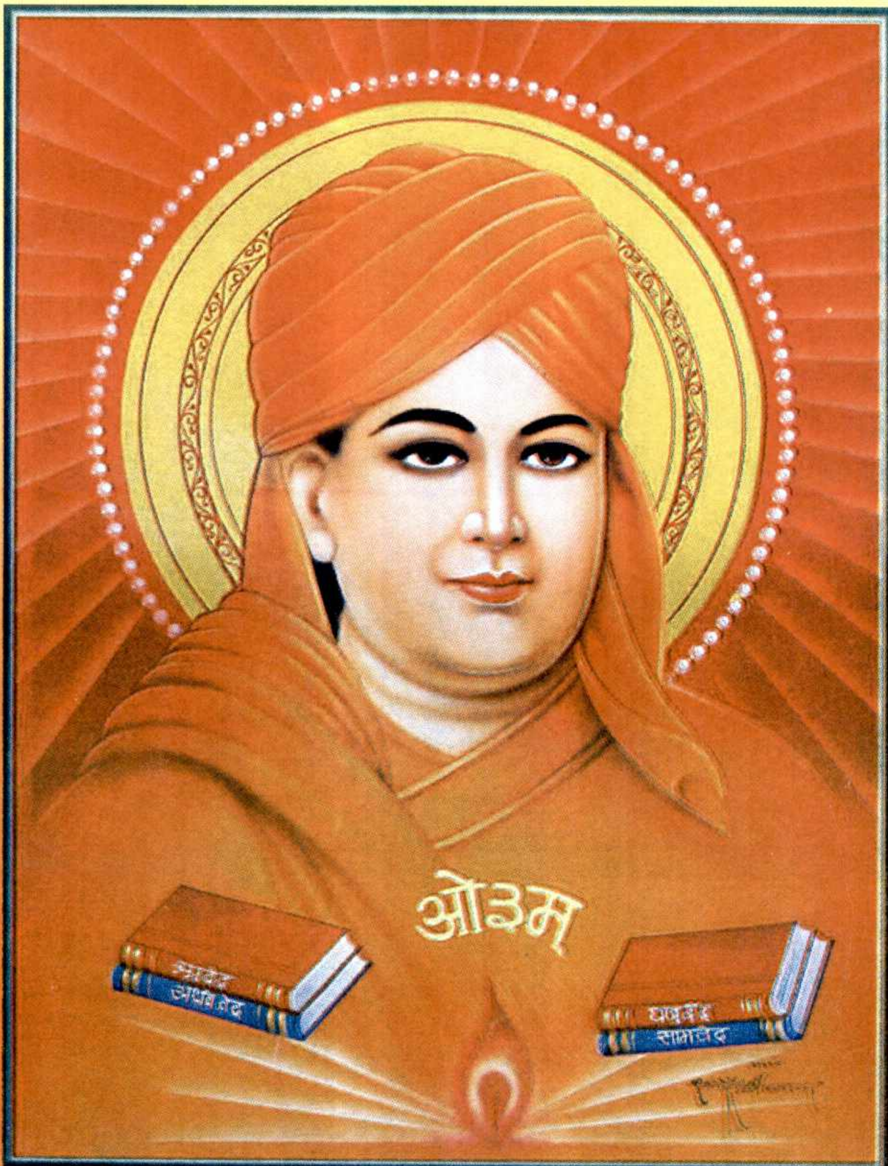

आर्य समाज के संस्थापक

महर्षि दयानन्द सरस्वती

thearyasamaj.org

बोधाष्टक

1

भारत भाग्योदय हुआ था, बोध उषा चमकाई, वेद प्रकाश हुआ था जब से, देवों में बंटी बधाई,
निशा निषिद्ध घोर तमसा में, कहीं रास्ता न पाये, समझ रखा था कुपथ अपना, कंटक वन में भरमाये।

2

आ गई थी सीमा उसकी, शासन रहा प्रविद्या का, गये मन्दिर में मूल शंकर हित, प्रकाश हुआ विद्या का,
सोचा गहन कहां ? हे शंकर कब आएंगे मंदिर में, देख रहे थे राह उसी की, सोच रहे थे अम्बर में।

3

रही तरंगें मिटती चलती, शिव दरश की चाह बढ़ी, असमंजस में रहे गुजरते, ज्यों-ज्यों तमसा रही चढ़ी,
सोये साथी आप अकेले, देख रहे इत उस ओर, कहीं न आता देखा शिव को, चारों ओर रात्रि घोर।

4

रही उदासी चेहरे पर थी, दर्शन शिव के न पाये, श्री पिता को आकर बोला कहा भोग लगाए,
पत्थर की प्रतिमा थी उसकी, शिव की पूजा कर आए, सुना मूल जब लगे सोचने, कहां ? रहे शिव भरमाये।

5

बीत चली कई शिव यामनी, शिव शिव करते युग बीते, किन्तु न जाना है कैसा ? रह गए शिव से रीते,
एक ही सच्चा शिव को खोजा, जो था शंकर मूल सही, जिसका आज प्रकाश रहा है, निकल पड़ा भ्रम मूल गही।

6

अरे! यामनी अंधियारी तू, आती न टंकारा में, कभी न जाता मन्दिर में वह, मिलता न अंधारा में,
अन्धेरे में शिव नहीं पाये, खोज खोज वन गिरि गुहा, मिला नहीं शिव शान्ति न पाई, चित में अति विक्षेप हुआ।

7

मिला एक उस अन्धेरे में, शिव का पता बताने को, वह था प्रज्ञा चक्षु गुरुवर, शिव का दरश दिखाने को,
ठीक पढ़ाया वेद गुरु मुख, शिव का दर्शन हो आया, हुआ प्रकाश सत्य शिव जाना, व्यापक ईश्वर शिव पाया।

8

अजर अमर अविनाशी न्यायिक, सब चिदानन्द सुखरासी, वश नाड़ी भिन्न अचल अखण्डी, स्वयं रहा है प्रकाशी,
निरालेप निरावर्ण निरमल, घट-घट व्यापक शिव स्वामी, पाया सो घनसार उसी को, वो सबका अन्तर्यामी।

thearyasamaj.org

बोधरात्रि का संदेश

ले०—श्री सुदर्शन शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन में सम्वत् १८९४ की शिवरात्रि का दिन महत्त्वपूर्ण है। इसी दिन महर्षि की अन्तर्लीन सत्यान्वेषिणीचेतना ने एक नया मोड़ लिया था। 14 वर्ष के बालक मूलशंकर ने श्रद्धानिष्ठ होकर पिता द्वारा बनाई हुई विधि का पूर्णतया पालन किया। जब अन्य परम्परा प्रेमी श्रद्धालु प्रौढ़जन अपने संकल्प को जाग्रत न रख सके और एक-एक करके निद्रा देवी की गोद में चले गए तो बालक मूलशंकर अपनी आँखों में पानी के छींटे दे-देकर अपने जागरण व्रत का पूर्णतया पालन करता हुआ अपनी अपार श्रद्धा का परिचय दे रहा था। परन्तुत वह श्रद्धा तब कुण्ठित हो गई जब छोटे से चूहे को स्वछन्द वृत्ति से उछल कूद करके शिवजी की मूर्ति पर रखे प्रसाद को खाते देखा। बुद्धि ने बल पकड़ा और सच्चे शिव को जानने की तीव्र इच्छा का उदय हुआ। तदनन्तर अपनी प्रिय बहन तथा चाचा के आकस्मिक निधन ने उस जलती हुई आग में घी का काम किया। परिणामतः रोग, मृत्यु आदि घटनाओं से व्याकुल होकर मूलशंकर ने सच्चे शिव की प्राप्ति तथा मृत्युञ्जय बनने के उद्देश्य से घर छोड़ने का निश्चय किया।

श्रद्धा और मेधा का समन्वय विपरीत परिस्थितियों में भी नवयुग का निर्माण करने वाले मेधावी महापुरूषों का प्रधान लक्षण है। वे प्रत्येक बात को श्रद्धा से स्वीकार करते थे और उसे बुद्धि से तोलते हुए सत्य की ओर उन्मुख होते हैं। ठीक इसी प्रकार बालक मूलशंकर ने श्रद्धानिष्ठ होते हुए भी अपनी मेधा शक्ति को, सत्यासत्य के विवेक को कभी कुण्ठित नहीं होने दिया। सत्य को ग्रहण करने तथा असत्य के त्यागने की वृत्ति को धारण करते हुए उन्होंने कठोर तपस्या एवं एकाग्रनिष्ठ चिन्तन के उपरान्त सच्चे शिव के स्वरूप को तथा मृत्युञ्जय बनने के उपाय को खोज निकाला। सम्वत् १८९४ में हृदयस्थली में बोया हुआ बीज कठोर तपस्या के बाद पल्लवित और कुसुमित होकर समस्त देश को अपनी सुगन्धि से सुगन्धित कर गया। जिससे देश में एक नई क्रान्ति का जन्म हुआ और एक नए युग का सूत्रपात हुआ।

आवश्यकता इस बात की है कि हम इस बोधरात्रि के पावन पर्व पर ऋषि द्वारा उपलब्ध उस बोध के, उस सत्यज्ञान के मूलमन्त्र को समझे और उसके स्वर में स्वर मिलाकर पूर्णनिष्ठा के साथ अपने जीवन का तदनुसार निर्माण करते हुए जनकल्याण के कार्यों में जुट जाएं। महर्षि के उस बोध का प्रथम मूल मन्त्र है-अन्ध श्रद्धालु बनकर मूर्ति पूजा करना छोड़ दो। यह मूर्तिपूजा किसी पत्थर में उत्कीर्ण ब्रह्मा, विष्णु महेश आदि की कल्पित प्रतिमा बनाकर उसकी पूजा करना मात्र ही नहीं अपितु प्रत्येक ग्रन्थ, परम्परा, रूढि या कर्मकाण्ड के आन्तरिक भाव को बिना बुद्धि का कसौटी पर तोले उसके बाह्य रूप पर टिके रहना भी मूर्ति पूजा ही है। उसे भी त्याग दो। प्रत्येक ग्रन्थ, विचार, परम्परा और कर्मकाण्ड को सत्य की कसौटी पर परखो और उसमें जो सत्य अंश दिखाई दे उसे ग्रहण करो और जो असत्य है उसे छोड़ दो। अपने आपको किसी पूर्वाग्रह या मिथ्याग्रह से ग्रस्त मत समझो। जीवन की सिद्धि सत्यनिष्ठ होने में है, केवल परम्पराओं में नहीं। महर्षि दयानन्द कालिदास के इस वचन का समर्थन करते हैं-

पुराणमित्येव न साधु सर्व, न चापि सर्वं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते, मूढः पर प्रत्ययनेय बुद्धिः।।

महर्षि दयानन्द का दूसरा मूलमन्त्र है- पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। अर्थात् न केवल ब्रह्म ही सत्य है और न केवल प्रकृति ही। बल्कि ये दोनों की सत्य एवं पूर्ण हैं। उस पूर्ण ब्रह्म से उत्पन्न प्रकृति भी पूर्ण है, मिथ्या या असत्य नहीं। अतः जीवधारी मानव को ऋतावान् एवं ऋतावृधः बनकर इन दोनों के लाभ को प्राप्त करने का यत्न करना चाहिए। तभी जीवन की सफलता है। केवल योग या ज्ञानमार्ग द्वारा ही परमात्मा का साक्षात्कार नहीं होता, अपितु करूणामय होकर कर्मयोग द्वारा समाज का कल्याण करना, उसमें सत्य और न्याय प्रतिष्ठित करके उसे सत्यं शिवं सुन्दरं बनाना भी शिव की उपासना का एक प्रकार है। यह सच्चे शिव की प्राप्ति का एक सुन्दर सोपान है। इसी कारण संसार के प्राणियों की उपेक्षा करके केवल आत्मलाभ के लिए किसी पर्वत कन्दरा के अन्दर सतत ब्रह्मलीन रहने की अपेक्षा ऋषि ने ईश्वर को साक्षी रखकर जनमानस में सत्य और न्याय को प्रतिष्ठित करने के निए और उसके निमित्त अपने जीवन की बलि देना भी स्वीकार किया।

ऋषि की दृष्टि में आजकल के भौतिक विज्ञान के उत्कर्ष के युग में भोग तृष्णा के संलिप्त तथा असत्य एवं अन्याय से पीड़ित समाज को उससे मुक्त करना सच्ची शिव पूजा है। वैसे तो जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः इस ध्रुव सत्य के अनुसार सभी को एक न एक दिन शरीर त्याग कर मृत्यु की गोद में जाना ही है और उस कार्य के लिए चाहे कितना दुःख प्राप्त करना हो, चाहे प्राण भी चले जाएं, परन्तु अपने इस मनुष्य धर्म से पृथक न होना ही मृत्युञ्जय पद को प्राप्त करने की अचूक औषध है। यदि हम इस बोधरात्रि के दिन ऋषिके उस संदेश को जो उन्होंने कठोर तपस्या एवं साधना के उपरान्त प्राप्त बोध के अनन्तर हमें दिया। उनके द्वारा दिए गए बोध को समझ कर अपने देश के धार्मिक, सामाजिक व राजनीतिक क्षेत्र में व्याप्त असत्य व अन्याय को दूर करके सत्य और न्याय को प्रतिष्ठित करने के लिए अपनी-अपनी शक्ति के अनुरूप सहयोग करें तभी इसबोधरात्रि को मनाने की सार्थकता है, परन्तु इसके लिए हमें स्वयं सत्यनिष्ठ तथा जाति, धर्म वर्ण आदि के भेदभाव से मुक्त होकर सर्वे भवन्तु सुखिनः की भावना को अपनाना होगा। केवल शिवरात्रि के दिन आर्य समाज में बोध पर्व मनाने से हमें कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। हमें इस बोध पर्व को जन जागरण अभियान बनाना होगा।

thearyasamaj.org

ऋषि दयानन्द-बोधरात्रि

ले०—श्री प्रेम भारद्वाज महामंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

17 फरवरी को हम ऋषि दयानन्द बोध दिवस मनाएंगे। शिवरात्रि का दिन भारतवासियों के लिए सौभाग्य की रात थी। इस रात्रि के प्रभाव से एक बार ज्वलन्त दैवी प्रकाश हुआ जो न केवल भारत का ही अपितु सारे संसार के अन्धकार और दु:ख के नाश करने का कारण बना। इस बोधरात्रि ने भारत तथा विश्व में महर्षि दयानन्द द्वारा जो जागृति उत्पन्न की वह किसी से छिपी नहीं है। यह जागृति सत्य की जागृति थी। इस रात्रि ने सबसे बड़ा पाठ यह पढ़ाया कि अन्धविश्वासों को छोड़कर अपनी बुद्धि और ज्ञान से प्रत्येक नर-नारी को काम करना चाहिए। यदि समस्त देशवासी तथा संसार के लोग यह निश्चय कर लेवें कि जो बात सत्य है उसी को हम मानेंगे और जो बात बुद्धि, ज्ञान और सृष्टि नियमों के विपरीत है उसको नहीं मानेंगे तो संसार का दु:ख और वैमनस्य दूर हो जाए। महर्षि दयानन्द ने बोध प्राप्त करके संसार को जो मार्ग दिखाया है वह मार्ग हमारे लिए प्रेरणादायक है। महर्षि दयानन्द ने मानव मात्र की उन्नति के लिए यह आवश्यक समझा कि सबके धार्मिक विचार एक से होंवे और वे विचार सृष्टि नियम, बुद्धि तथा वेदज्ञान के अनुकूल होवें। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि किसी जाति की राजनैतिक व्यवस्था, उसके धार्मिक विचार एवं पारस्परिक व्यवहार के गठन पर निर्भर रहती है। जिस जाति के धार्मिक विचार ऊंचे हों, जिसका आचार-विचार उत्तम और जिसके पारस्परिक व्यवहार में सच्चाई और प्रेम हो उसकी राजनैतिक व्यवस्था भी श्रेष्ठ होगी और किसी अन्य जाति को उस पर राज करने का साहस नहीं होगा। भारत को उच्च बनाने का उन्होंने आर्य समाज को साधन बनाया और उच्च बनाने के सभी साधनों का प्रचार किया। स्वराज्य मिल जाने पर आर्य समाज को देश की राजनैतिक व्यवस्था को दृढ़ एवं उत्तम बनाए रखने के लिए लोगों के आचार विचार और पारस्परिक व्यवहार को सही दिशा में बनाए रखने का विशेष कार्य करना है। महर्षि द्वारा प्रदर्शित वेद मार्ग ही एक मात्र मार्ग है जो मानव मात्र को एक जगह एकत्र कर सकता है और एक दूसरे के वैमनस्य को दूर कर सकता है। ऐसे महान् गुरू की शिक्षा को कभी न भुलाना चाहिए और जिन लोगों के हृदय में सत्य को जानने और परोपकार करने की लगन है उनको तो स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए। शिवरात्रि की रात को हिन्दु लोग तो पवित्र मानते ही हैं परन्तु उन सबके तथा उन लोगों के लिए भी जो महर्षि दयानन्द को अपना शिक्षक मानते हैं यह आवश्यक है कि इस रात्रि को स्वामी जी महाराज के सिद्धान्तों पर विचार करें। सत्य और ईश्वर में आस्था रखते हुए आत्मा को बलवान बनाएं और अन्धविश्वास और असत्य की लहरों से बचें। इस दिन प्रत्येक आर्य को शान्त भाव से आत्म निरीक्षण करके अपनी त्रुटियों को दूर करने और आर्य समाज की उन्नति में योगदान देने का संकल्प करना चाहिए। आज देश और संसार को महर्षि दयानन्द जैसे महान् पुरूषों की आवश्यकता है जो राष्ट्र का सही मार्गदर्शन कर सकें। धार्मिक और सामाजिक उत्थान के बिना राजनैतिक उत्थान सम्भव नहीं है। महर्षि की दिव्य दृष्टि ने इस तथ्य को भली भांति देख लिया था। तभी तो जब उनसे प्रश्न किया गया कि भारत का उद्धार किन उपायों से हो सकता है तो उन्होंने कहा था कि जब तक देश और समाज के लोगों का एक धर्म, एक भाषा और एक समान सुख-दु:ख की अनुभूति नहीं होती तब तक समाज की उन्नति और उसका योगक्षेम भली भांति सिद्ध नहीं हो सकता। महर्षि दयानन्द देश की राजनैतिक एकता के लिए विदेशी शासन का अन्त और स्वराज्य की स्थापना के लिए प्रयत्नशील थे। धार्मिक एकता के लिए वे भूमण्डल में वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार और प्रभुत्व देखना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने संसार को वेदों की ओर चलने का आह्वान किया और मत-मतान्तरों पर प्रबल प्रहार किया। सामाजिक एकता के लिए उन्होंने कुरीतियों और विविध बुराईयों का खण्ड़न करके समाज सुधार का प्रशंसनीय कार्य किया।

सामाजिक एकता के मार्ग में जन्मना जात-पात का बड़ा भयंकर रोड़ा है। इसके रहते सामाजिक राजनैतिक अभ्युत्थान के कार्य में आशानुरूप प्रगति होना सम्भव नहीं है। महर्षि दयानन्द ने जात-पात की भावना को मिटाने और गुण कर्मानुसार मानव की योग्यता का निरूपण करने का सिद्धान्त दिया। सांस्कृतिक एकता के लिए देश भी में समान भाषा की आवश्यकता पर बल दिया। समान भाषा की आवश्यकता पर बल देते हुए उन्होंने स्वयं गुजराती होते हुए भी अपने सभी ग्रन्थ हिन्दी और संस्कृत में लिखे। महर्षि दयानन्द ने लोगों के आर्थिक विकास के लिए गोरक्षा पर विशेष बल दिया। यदि हमारे देश के कर्णधार तुश्टिकरण की अवलम्बन किए बिना हिन्दी भाषा के प्रचलन और गाहत्या निषेध के लिए कटिबद्ध हो जाए तो देश का बहुत कल्याण हो सकता है। महर्षि दयानन्द को श्रद्धाजंलि प्रस्तुत करते हुए पूर्व राष्ट्रपति सर्वपल्ली राधा कुष्णन् ने कहा था कि- जब देश पर संकट के बादल छाए हुए हों तब हमें शत्रु की चुनौती को स्वीकार करके उस शिक्षा को याद करना है जो महर्षि दयानन्द ने हमें दी है। स्वामी दयानन्द एक महान् सुधारक और प्रखर क्रान्तिक्रारी महापुरूष तो थे ही साथ ही उनके हृदय में सामाजिक अन्यायों को उखाड़ फैंकने की प्रचण्ड अग्नि भी विद्यमान थी। उनकी शिक्षाओं का हमारे लिए बहुत महत्त्व है। शिवरात्रि के इस पर्व को आर्य समाज में ऋषि बोधोत्सव के रूप में मनाया जाता है और ऋषि महिमा का गुणगान किया जाता है। शिवरात्रि को बोधोत्सव के रूप में मनाना हमारे लिए तभी फलदायक सिद्ध होगा जब हम महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों के अनुसार कार्य करेंगे। वेद की सार्वभौम शिक्षाओं को जन-जन में प्रचारित करते हुए अन्य मत-मतान्तरों और कुरीतियों को समाज से दूर करेंगे।

thearyasamaj.org

यथार्थ बोध

ले०—श्री सुधीर शर्मा, कोषाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

सूर्य उदय होता है तो रात्रि का बीजारोपण प्रारम्भ हो जाता है, रात्रि हर रोज आती है और सूर्य के उदय होते ही चली जाती है। परन्तु हम फाल्गुण वदि १४ की रात्रि के महत्त्व के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न मतावलम्बियों के अलग-अलग दृष्टिकोण हैं। अपने पौराणिक भाई इस शिवरात्रि को इसलिए अधिक महत्त्व देते हैं कि इस दिन शिव ने सृष्टि की उत्पत्ति की थी और प्रलय भी इसी दिन करेगा। इसलिए इस भयंकर समय को टालने के लिए शिव के उपासक शिव की आराधना करते हैं। आर्य समाज में इस शिवरात्रि को बोध रात्रि के रूप में मनाते हैं, क्योंकि आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी को इसी शिवरात्रि के दिन सच्चे शिव का ज्ञान हुआ था। यदि सच कहा जाए तो आर्य समाज की स्थापना केवल चूहे के कारण ही हुई जिसको देखकर मूलशंकर ने ज्ञान प्राप्त किया और उनके हृदय में सच्चे शिव को प्राप्त करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। शिवरात्रि की इस घटना से तो आर्य बन्धु अवगत ही हैं कि मूलशंकर के पिता शिव के उपासक थे और अपने पुत्र को भी शिव का उपासक बनाना चाहते थे। इसलिए शिवरात्रि के व्रत की महानता बताकर मूलशंकर को व्रत रखने के लिए बाध्य किया। मूलशंकर को भी शिव के दर्शन करने की आकांक्षा थी। अत: वह उसको प्राप्त करने के लिए शरीर के कष्टों को सहकर भी जागता रहा। परन्तु मूलशंकर कुछ ही क्षणों में देखता है कि जिस शिव के वह दर्शन पाना चाहता था उसी शिव पर एक छोटा सा चूहा आकर उछल कूद मचा रहा है तथा उसके नैवेद्य को भी खा रहा है। लेकिन वह शिव अपनी रक्षा के लिए हिल भी नहीं रहा था। तब मूलशंकर के मन में एक ज्ञान की किरण जागी, फिर उसने विचार किया कि जिस शिव ने सारे संसार को उत्पन्न किया, जो सारे संसार का पालन करता है वह शिव और ही है। इसी धारणा को मन में लेकर मूलशंकर उसकी खोज में आगे बढ़ा। जहां-जहां पर भी उन्हें पता चला कि अमुक तपस्वी योगी या ऋषि सच्चे शिव के दर्शन करा सकता है, अनेकों कष्ट उठाकर भी उस व्यक्ति तक जाने की चेष्टा की। अन्त में इसी प्रकार विचरते हुए मथुरा के एक तपस्वी योगीनिष्ठ ऋषि की प्राप्ति हुई तथा उनके चरणों में बैठकर सच्चे शिव के रहस्य को जानकर ज्ञान प्राप्त किया। महर्षि दयानन्द के गुरू स्वामी विरजानन्द से सच्चे शिव का ज्ञान प्राप्त करके सच्चे शिव की प्राप्ति के लिए जिन सिद्धान्तों की नींव ड़ाली, जिन लुप्त परम्पराओं को जगाया उसी के परिणामस्वरूप आर्य समाज की स्थापना हुई। महर्षि दयानन्द जी शिवरात्रि का व्रत न रखते तो उन्हें सच्चे शिव को प्राप्त करने के लिए प्रेरणा भी नहीं मिलती और न ही आर्य समाज की स्थापना होती। महर्षि दयानन्द जी उस शिवरात्रि को स्वयं जगे और बाद में अपना सारा जीवन दूसरों को जगाने में लगा दिया। जो चिंगारी उनके हृदय में उस शिवरात्रि को प्रज्ज्वलित हुई थी उस चिंगारी को उन्होंने बुझने नहीं दिया। अनेकों पर्वतों, कन्दराओं, गुफाओं में जाकर उन्होंने उस चिंगारी को खूब प्रज्वलित करने का प्रयास किया और बुझने के स्थान पर उन्होंने उसे उसी प्रकार जलाए रखा। गुरू विरजानन्द जी के चरणों में बैठकर उनकी सारी शंकाओं का समाधान हो गया। जिस प्रकार का ज्ञान महर्षि दयानन्द जी प्राप्त करना चाहते थे, उस ज्ञान की प्राप्ति उन्हें गुरू विरजानन्द की कुटिया में प्राप्त हुई। गुरू विरजानन्द ने आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन से उनके अन्दर के संशयों को मूल रूप से नष्ट कर दिया। जिस शिव को जानने के लिए उन्होंने घर को त्याग कर जंगल का रास्ता पकड़ा था, उसका यथार्थ बोध उन्हें उनके चरणों में बैठकर प्राप्त हुआ। अगर उस शिवरात्रि को महर्षि दयानन्द सो जाते तो भारत का भाग्य सो जाता। वे स्वयं जगे और सारे देश को जगा दिया। लोग वेदोक्त मार्ग को भूल कर अन्य मत-मतान्तारों में जकड़े हुए थे। पाखण्ड और अन्धविश्वास के कारण समाज में अनेक प्रकार की कुरीतियां बढ़ रही थी। ऐसी परिस्थिति में महर्षि दयानन्द ने गुरू विरजानन्द से जो आर्ष ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त किया था, उसी ज्ञान से उन्होंने लोगों को बताया कि वेदों में कहीं पर भी मूर्ति पूजा का विधान नहीं है। अपने सम्पूर्ण जीवन में वे इसी प्रकार वेदों के प्रचार का कार्य करते रहे। उन्होंने अपनी संस्कृति, सभ्यता और मातृभाषा को अपनाने पर जोर दिया। परिणामस्वरूप देश में एक नई क्रान्ति का उदय हुआ और लोगों में अपने देश के प्रति स्वाभिमान की भावना पैदा हुई। यह सब उस शिवरात्रि के कारण हुआ जिस रात्रि को महर्षि दयानन्द ने जागरण किया।

बोध रात्रि हर वर्ष आती है और चली जाती है। परन्तु इस बोध रात्रि का क्या अभिप्राय है, यह कभी हमने सोचा भी नहीं, अगर आज हम सभी इस रात्रि के महत्त्व को समझ लें तो हमें भी मूलशंकर की तरह बोध प्राप्त हो सकता है और यह रात्रि हमारे लिए भी बोध रात्रि बन जाती है। इस शिवरात्रि के उपलक्ष्य पर हमें देखना होगा कि आर्य समाज मे लोगों की संख्या में कमी क्यों आई है? यह बोध पर्व हमारे लिए केवल बोध पर्व नहीं अपितु चिन्तन पर्व होना चाहिए। इस दिन हमें चिन्तन करना चाहिए कि जिन उद्देश्यों के लिए महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की थी, क्या हम उन उम्मीदों पर खरा उतर रहे हैं। जिस प्रकार महर्षि दयानन्द ने उस रात्रि को बोध प्राप्त किया था उसी प्रकार हम भी महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र पढ़कर उनके जीवन से सच्चे शिव को प्राप्त करने का संकल्प ले सकते हैं। यह हमारे उपर निर्भर करता है कि हम जागना चाहते हैं, यथार्थ बोध प्राप्त करना चाहते हैं या फिर सोना चाहते हैं अथवा ज्ञान प्राप्त ही नहीं करना चाहते हैं। यदि हम थोड़ा सा भी चिन्तन करेंगे और आर्य समाज की उन्नति के लिए कार्य करेंगे तो हमें सफलता अवश्य प्राप्त होगी और यथार्थ बोध भी प्राप्त होगा।

thearyasamaj.org

आज की शिवरात्रि फिर सन्देश लाई है

ले०—श्री अशोक पुरुथी रजिस्ट्रार आर्य विद्या परिषद पंजाब

टंकारा के एक छोटे से शिव मन्दिर में घटी चूहे वाली घटना इतनी प्रसिद्धि पा चुकी है कि उसके दोहराने की आवश्यकता नहीं है। यह कोई विशेष घटना नहीं थी फिर भी यह घटना संसार की अन्य घटनाओं में विशेष स्थान रखती है। इसका कारण यह है कि इस घटना ने युग को एक नई दिशा दी। ऐसी घटनाएं फिर किसी शिवालय में न घटी हो ऐसी बात भी नहीं पर बाकि घटनाएं ऐसी दिशा बोध देने वाली घटना नहीं बन सकी। कारण की न तो कोई उस घटना से दिशाबोध देने वाला और न ही दिशा बोध लेने वाला महर्षि दयानन्द सरीखा अन्य कोई संसार में उत्पन्न हुआ है। अगर देखा जाए तो शिवरात्रि की घटना अत्यन्त सामान्य होते हुए भी अति क्रन्तिकारी घटना थी और क्रन्ति की अपनी यह विशेषता मानी गई है कि वह छोटी-छोटी बातों से उत्पन्न हुआ करती है। इतिहास ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है। पर इस घटना में छिपी क्रान्ति की बात कुछ और ही थी जिसके लिए किसी कवि ने ठीक ही कहा है-

एक मूषक ने जमाया उग्र ऊहापोह, जन्म के संग लाया क्रांति लाया सत्य का विद्रोह।।

वस्तुत: यह घटना ऐसी थी कि जिस से समसस्त दिशाओं ने एक तीव्रतर सुधारात्मक मोड़ लिया। चिरन्तन सत्य की खोज के लिए बालक मूलशंकर रात भर जगा था। यह उसका जागरण एक अद्भुत एवं अनोखा जागरण था। ऐसा जागरण कि जिसके लिए कवि ने कहा कि-

तुम जगे ऐसे कि फिर सोए नहीं पल भर।
प्रातः लाया रात भर का जागरण ऋषिवर।।

पर क्या मूलशंकर का वह जागरण केवल उसी रात्रि तक ही सीमित था? नहीं वह तो सदा-सदा के लिए जग गया था और यदि हम कहें कि उसके बाद फिर कभी सो ही नहीं पाया तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी और सत्य तो यह है कि वे स्वयं ही नहीं जगे सारे संसार को जगा गए।

किसके लिए था ऋषि का यह जागरण? आज की शिवरात्रि यही बताने आई है। क्यों जगा था वह और क्यों जगाया था उसने संसार को? यही आज का हम सबका चिन्तन होना चाहिए। और फिर क्यों वह वर्षों वनों, पर्वतों की खाक छानता रहा? क्योंकर उसने उसने इतने कष्ट उठाए? शिव की पिण्डी पर चूहे को चढ़ते तो औरों ने भी देखा था फिर मूलशंकर को कौन सी ऐसी बात लगी जो और न देख सके? यही चिन्तन का विषय है। शिवरात्रि का पर्व हर वर्ष यही बताने के लिए बाता है।

शिवरात्रि की उस रात को मूलशंकर ने वह सत्य देखा जो विरले देख पाते हैं और वह भी इसलिए देख पाया कि वह ारत भर जागता रहा, सर्वात्मना जागता रहा, तभी वह सत्य के दर्शन कर सका। लोग जग कर भी नहीं जगते अत: वे सत्य के दर्शन भी नहीं कर पाते है और जो सो जाते हैं उनका तो कहना ही क्या? इसीलिए कहा है कि- जो जागत है सो पावत है, जो सोवत हैं सो खोवत हैं। शिवरात्रि के इस पर्व पर पौराणिक बन्धु जागरण कर रात भर जगते रहने का उपक्रम करते हैं, पर उनका आत्मा तो जगता ही नहीं है। इसलिए वे सत्य के दर्शन नहीं कर पाते। मूलशंकर का आत्मा जगा था तभी सच्चे शिव के दर्शन करने में वह सफल हो सका। मूलशंकर ने सभी सोए हुओं को उठाया और कहा कि यह तो सच्च शिव प्रतीत नहीं होता। लोग उस पर हंस दिए। पिता ने उनकी शंकाओं का समाधान करने का प्रयास किया परन्तु क्या सत्य कहीं दबने वाला होता है? वह प्रकट होकर ही रहा।

शिवरात्रि की घटना मूलशंकर को सच्चा आस्तिक बना गई। यह वह घटना थी जिस पर सुधार का भव्य भवन खड़ा किया गया जिसका नाम आर्य समाज पड़ा। आर्य समाज का यह दायित्व है कि वह महर्षि के दिव्य संदेश को घर-घर तक पहुंचाए। आर्य समाज स्वयं जगे और संसार को जगा दे। शिवरात्रि का पर्व हर वर्ष यही प्रेरणा देने के लिए आता है कि हम महर्षि दयानन्द के सन्देश को घर-घर तक पहुंचाने का प्रयास करें। आज से 177 वर्ष पूर्व भी ऐसी एक शिवरात्रि की रात आई थी जिस रात को मूलशंकर ने मूल से अपना सफर शुरू किया था और उच्च शिखर पर पहुंचे। यह पर्व हर वर्ष हमारे सामने यह प्रश्न खड़ा कर देता है कि हमने पिछले वर्ष में क्या किया है। क्या हम केवल बोधोत्सव का पर्व मनाकर महर्षि दयानन्द का गुणगान करके अपने कर्त्तव्य का पालन कर लेते हैं? आज आवश्यकता है कि आर्य समाजें अपने-अपने दायित्व को पहचानें, अपनी सीमा-सामर्थ्य पर विचार करके आज की समस्याओं से मोर्चा लेने के लिए इसी पावन पर्व पर दृढ़ संकल्प हो। वैदिक संस्कृति का प्रचार-प्रसार हो, यही आर्यजनों का परम लक्ष्य है। हम ऋषि दयानन्द के स्वप्नों को साकार करते हुए आर्य समाज के लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए कृतसंकल्प हो जाएं।

thearyasamaj.org

आधुनिक भारत के निर्माता-महर्षि दयानन्द

ले०—श्री देवेन्द्र शर्मा उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

महर्षि दयानन्द सरस्वती भारत के आधुनिक तत्त्ववेता, सुधारक तथा श्रेष्ठ पुरूष ही नहीं थे अपितु वह आधुनिक भारत के कुछ प्रमुख राष्ट्र निर्माताओं में से एक हैं। महर्षि की असंख्य देन हैं मानवता और विश्व को परन्तु उनकी तीन ऐसी महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां हैं जिन्हें भुलाया नहीं जा सकता। उन्नीसवीं शताब्दी मे देश के शिक्षित वर्ग में नास्तिकता पनप रही थी और सामान्य जनता अन्धविश्वास और रूढ़ियों से ग्रस्त थी। उन्होंने आचार और धार्मिक पुनरूत्थान के आधार पर नए भारत की नींव सुदृढ़ की। उन्होंने घोषित किया कि वेदों तथा प्राचीन भारतीय चिन्तन में विज्ञान सम्मत और नैतिक धार्मिक सत्य निहित है। उन्होंने वेदों तथा प्राचीन तत्त्वज्ञान की ऐसी बुद्धिपूर्वक व्याख्या की कि कड़े से कड़ा बुद्धिवादी भी उससे सहमत हो गया। इसी के साथ उन्होंने ऐसे शुद्ध ईश्वरवाद की प्रतिष्ठा की जिससे पश्चिमी विचारक और चिंतक भी सहमत थे। प्राचीन धर्मग्रन्थों और तत्त्वज्ञान में से उन्होंने ऐसे मोती प्रस्तुत किए जिन्हें देशवासियों ने पूरे विश्वास और आस्था के साथ ग्रहण किया। परिणामस्वरूप पश्चिमी एवं प्रतिस्पर्द्धी सम्प्रदायवादियों के आक्रमण परत हो गए। हताश भारतीय मानस भारतीय तत्त्वज्ञान की ज्योति से एक नई प्रेरणा प्राप्त कर नैतिक एवं वैचारिक दृष्टि से स्वावलम्बी और शक्तिसम्पन्न होने लगा। ऋषि की यह वैचारिक देन उनकी पहली उपलब्धि थी।

महर्षि दयानन्द गुजरात में जन्मे थे। घर से वह सच्चे शिव की खोज में सत्यज्ञान की प्राप्ति के लिए वनों पर्वतों एवं विभिन्न प्रदेशों में घूमते रहे। 1860 से 1863 तक गुरू विरजानन्द के चरणों में बैठने के बाद वह 1964 से 1883 तक निरन्तर बीस वर्षों तक भगवान पर विश्वास कर एकाकी साधक की तरह नवीन आर्यावर्त की प्रतिश्ठा के लिए देश भर में घूमे। आगरा, ग्वालियर, जयपुर, काशी, अजमेर, बम्बई, पूना, कलकत्ता, पटना, जोधपुर आदि स्थानों में ही नहीं अपितु देश के अनेक जनपदों और नगरों में उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश और आर्य सिद्धान्तों की अलख जगाई। संसार के अन्य महापुरूषों की भांति उन्होंने शारीरिक यातनाएं सही। विरोधियों, प्रतिस्पद्धियों के विरोधों और अत्याचारों का सामना किया। पूरे विश्वास और साहस के साथ उन्होंने देश में व्याप्त कुरीतियों, अज्ञान, विषमता और अन्याय का सामना किया। इसी समय उन्होंने मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना की। इसी के साथ उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश एवं वेदों के भाष्य आदि प्रस्तुत कर हिन्दी के माध्यम से जनता से सीधा सम्पर्क स्थापित किया। उन्होंने किसी संस्था, मठ मन्दिर की गद्दी नहीं सम्भाली, न वह अपने नवीन आन्दोलनों के सर्वे सर्वा बने। वह तो अपने आपको समाज का एक सामान्य सदस्य कहते थे। इसके बावजूद केवल अपने व्यक्तिगत प्रयत्नों से उन्होंने देश में एक अभूतपूर्व सामाजिक एवं धार्मिक क्रान्ति कर दी। शंकराचार्य के बाद पदयात्रा के माध्यम से अपूर्व धार्मिक क्रान्ति करने वाले वह दूसरे संत थे। महर्षि की यह धार्मिक क्रान्ति उनकी दूसरी बड़ी उपलब्धि थी। आर्य समाज के माध्यम से देश और विदेशों में शिक्षा, समाज सुधार, दलितोद्धार, स्त्री शिक्षा, नवीन गुरूकुल शिक्षा प्रणाली, गोरक्षा, हिन्दी प्रचार आदि नानाविध क्षेत्रों में जो कार्य हुआ है उसे प्रत्येक राष्ट्रवादी स्वीकार करता है। इन कार्यों की महत्ता है और इन कार्यों को सम्पन्न कर आर्य समाज की गरिमा बढ़ी है। परन्तु महर्षि की सबसे बड़ी उपलब्धि उनकी मानवता को वह वैचारिक देन थी जो उन्होंने आर्य समाज के नियमों, सामाजिक व्यवस्था और शिक्षा के क्षेत्र में नई दृष्टि देकर प्रस्तुत की है। आर्य समाज के नियम मानवता के लिए पथ प्रदर्शक हैं। ऋषि न स्वयं समाज के सूत्रपात बने, न उन्होंने कोई अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। बल्कि उन्होंने आर्य समाज के नियमों के द्वारा एक नई जीवन दृष्टि दी। ऋषि ने सीख दी- अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए, दूसरे आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य संसार का उपकार करना और शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना है। तीसरे सब अपनी उन्नति में सन्तुष्ट न रहें, प्रत्युत सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें, साथ ही मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें। ऋषि ने अपने जीवनकाल के लिए तथा बाद के लिए इन नियमों को ही समाज और राष्ट्र का पथ प्रदर्शक नियुक्त किया था। दूसरे धर्मों और सम्प्रदायों के पैगम्बर और उनकी पूरी धार्मिक परम्परा और उत्तराधिकारी हैं, परन्तु महर्षि ने मानव मात्र की उन्नति, सबकी एवं संसार भर की उन्नति और अविद्या के नाश के कार्य को ही प्राथमिकता दी थी। यह महर्षि की तीसरी उपलब्धि थी। महर्षि दयानन्द ने गुरू विरजानन्द जी के सानिध्य में सच्ची शिक्षा ग्रहण कर उन्हें राष्ट्र को पथ प्रदर्शन करने के माध्यम से सच्ची गुरूदक्षिणा दी थी।

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी बोध दिवस मनाते हुए हम यह संकल्प लें कि महर्षि दयानन्द ने सच्चे शिव को प्राप्त करके जो मार्ग दिखाया है, हम भी उसी मार्ग का अनुसरण करेंगे। जिस प्रकार महर्षि दयानन्द ने बोध प्राप्त करके संसार का मार्गदर्शन किया है उसी प्रकार हम भी महर्षि दयानन्द के कार्यों से प्रेरणा लेकर हम भी मानवता के लिए कार्य करेंगे। हमारा बोध पर्व मनाना तभी सार्थक होगा जब हम महर्षि दयानन्द के पदचिह्नों पर चलने का प्रयास करेंगे। ऋषि बोध पर्व के अवसर पर हमें महर्षि की उपलब्धियों का स्मरण करते हुए ऋषि के आदेशों को कार्यान्वित करना चाहिए।

thearyasamaj.org

शिवरात्रि का दिव्य सन्देश

ले०—श्री रणजीत आर्य मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

हमारे भारतवर्ष में सदियों से शिवरात्रि का पर्व मनाते चले आ रहे हैं। कितनी ही शिवरात्रियां आई और चली गई। न जाने कितने पुरातन काल से लोग शिवरात्रि के दिन उपवास कर, रात्रि को श्रद्धा और निष्ठा से किसी शिवमन्दिर में सारी रात जागरण करके शिव की प्रतीक्षा करते-करते थक गए होंगे। इनमें से कितनों को शिव के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, कितनों को वास्तव में यह रात्रि कल्याणकारी सिद्ध हुई यह तो नहीं कहा जा सकता। परन्तु इसमें लेषमात्र भी सन्देह नहीं कि आज से लगभग 177 वर्ष पूर्व बालक मूलशंकर के चक्षु तो इस रात्रि को उस समय ही खुल गए थे, जब उसने शिव मूर्ति पर भक्तों द्वारा चढ़ाए चावल मिष्ठान आदि को खाते और उछलते कूदते हुए देखा। बालक मूलशंकर घर बार छोड़ सच्चे शिव की तलाश में निकला और आखिर उसको पा ही लिया। इस प्रकार मूलशंकर ने स्वयं जागकर दूसरों को भी जगाया। यह एक साधारण घटना थी जिसने बालक मूलशंकर के मन में भारी क्रान्ति उत्पन्न कर दी और समय बीतने पर सारे विश्व में विशेष कर भारत के धार्मिक क्षेत्र में एक बड़ी हलचल पैदा कर दी जिससे प्रभावित होकर लोग अपने-अपने धर्मशास्त्रों की छानबीन करने लगे।

बालक मूलशंकर ने ईश्वर का साक्षातकार कर अठारह-अठारह घण्टे की समाधि की सिद्धि प्राप्त की और ऋषि दयानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए। महर्षि दयानन्द चाहते तो सारा जीवन समाधि का आनन्द लूटते रहते। परन्तु ऋषि को यह अभीष्ट नहीं था। तत्कालीन देश की दयनीय दशा ने दयानन्द के हृदय में एक भारी तड़प पैदा कर दी थी। इसी कारण उन्होंने समाधि के आनन्द को छोड़कर देश के सामाजिक सुधार के कार्यक्षेत्र की ओर ध्यान दिया। महर्षि दयानन्द के प्रादुर्भाव से पूर्व देश एक विकट स्थिति से ग्रसित था। क्या राजनीतिक, क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या आर्थिक सभी दृष्टियों से राष्ट्र का महापतन हो रहा था। चारों ओर निराशा, अकर्मण्यता, द्वेष, स्वार्थ, नास्तिकता के बादल छाए थे। लोग पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध में अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति को भूल बैठे थे। नर बलि, पशुबलि तथा अछूतों पर अमानुषिक अत्याचार होते थे। विधवाओं और अबलाओं का करूण क्रन्दन सुनाई देता था। दासता की बेड़ियों में जकड़ा देश अपना सर्वस्व खो बैठा था। ऐसी भयंकर दशा में दयानन्द अपने समाधि के आनन्द को लात मारकर समाज सेवा के कार्यों में लग गए। उस महान् तपस्वी ने थोड़े ही समय में देश की काया पलट दी। लोगों का अपने पूर्वजों औ र अपनी गौरवमयी प्राचीन सभ्यता की ओर ध्यान आकर्षित हुआ और राष्ट्र में महान् जागृति और चेतना आ गई। युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द ही थे जिन्होंने बड़ी ही निर्भीकता से बताया कि विदेशी राज्य चाहें कितना ही अच्छा क्यों न हो, परन्तु स्वदेशी राज्य से बढ़कर अच्छा नही हो सकता।

इन सब कुरीतियों और रूढिवाद के झुण्ड का उन्मूलन करने में ऋषि को सफलता मिली। महर्षि दयानन्द ने सामाजिक , राजनीतिक तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में क्रान्ति का शंखनाद किया। परन्तु कुछ स्वार्थी लोगों ने उनके पवित्र मन्तव्य को न समझ कर उन्हें हर प्रकार से अपमानित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। महर्षि दयानन्द ने भी मान-अपमान की, लाभ हानि की तथा अपने जीवन की परवाह न करके सभी आक्रमणों का डटकर सामना किया। मठाधीश बनने के प्रलोभन, कर्णसिंह की चमकती तलवार, सांपों के प्रहार, गालियों की बौछार भी महर्षि को अपने कर्त्तव्य मार्ग से विचलित नहीं कर सके। स्वार्थी समाज द्रोही विपक्षी मठाधीशों द्वारा रचे गए षडयन्त्र भी ऋषि दयानन्द के कार्य में बाधा नहीं डाल सके। महर्षि दयानन्द को अनेकों बार विष पान भी करना पड़ा और अन्त में इसी विष के कारण उनकी जीवन लीला भी समाप्त हुई। क्योंकि ऋषि का जीवन बहुमुखी था और महर्षि दयानन्द की यह विशेषता थी कि उस समय सहस्रों लोग ऋषि की ओर झुके और उनके साथ मिलकर सहयोग देने लगे। विधर्मियों को मुंह की खानी पड़ी और सभी विधर्मी ऋषि के प्रचार और उनकी अकाट्य युक्तियों से इतने प्रभावित हुए कि उनको अपनी वर्षों से चली आ रही पुरानी मान्यताओं को बदलने पर बाधित होना पड़ा। परन्तु दुःख है कि जिन कुरीतियों को दूर करने के लिए इतनी मुसीबतें सही, अनेकों बार विषपान किया। आज वे फिर उग्ररूप धारण करके हमारे सामने आ खड़ी हुई हैं। आज फिर स्थिति अन्धकारमय है। अनेक प्रकार की कुरीतियां, पाखण्ड अन्धविश्वास बढ़ रहे हैं। इसलिए आज फिर आवश्यकता है कि महर्षि दयानन्द के संदेशों को जन-जन में प्रचारित करें। शिवरात्रि का यह पावन पर्व हर वर्ष यह संदेश लेकर आता है कि हम भी बोध को प्राप्त करें। यह दिवस उद्बोधन का दिवस है। प्रतिवर्ष इसका स्मरण व अनुष्ठान व्यक्ति, समाज व राष्ट्र में उल्लास व उत्साह उत्पन्न करता है। शिवरात्रि का यह पर्व हमें दिव्य संदेश देता है कि जिस प्रकार बालक मूलशंकर के हृदय में इस दिन नव ज्योति का संचार हुआ था, उसी प्रकार हम भी अपने हृदय में ज्ञान की ज्योति का संचार करें, सच्चे शिव को प्राप्त करने का संकल्प लें और महर्षि दयानन्द के कार्यों तथा उद्देश्यों को अपने जीवन के अन्दर अपनाएं।

thearyasamaj.org

शिवरात्रि का पर्व और महर्षि दयानन्द

ले०—श्री सुरेश शास्त्री सभा कार्यालय जालन्धर

प्राचीन रूढ़िगत परम्परा में फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी को महाशिवरात्रि का परम पावन पर्व व्रत के रूप में निराहार रहकर बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ आधुनिक तथाकथित सनातन धर्मावलम्बी महानुभाव मनाते चले आ रहे हैं। इस प्रसिद्ध पर्व का आधार भागवत आदि पुराणों की ही परम्पराओं पर अवलम्बित है। जिसका वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत वेद संहिताओं, ब्राह्मण ग्रन्थों, आरण्यकों, उपनिषदों, कात्यायनादि श्रौत सूत्रों, धर्मशास्त्रों और वेदांगों से कोई सम्बन्ध नहीं है। जिनकी मान्यताओं का एकमात्र आदर्श बिन्दु पुराण, उपपुराण आदि समस्त परवर्ती एवं काल्पनिक परस्पर विरूद्ध साहित्य ही है। उसी के आधार पर वे शिवरात्रि के महातम्य का गुणगान करते हैं। शिवरात्रि के दिन भर उपवास रखकर रात को शिव मन्दिर में जागरण करके वे अपने आपको सौभाग्यशाली समझते हैं। ऐसे विज्ञान के युग में भी उनका ज्ञान विकसित नहीं हो सका। आज भी जो पैदल यात्रा करके रेलगाड़ी में भी खड़े रहकर गंगा जल से भरी कांवड़ लेकर सुदूर प्रान्तों में नगर, उपनगरों में जाकर उस भोलेनाथ पर बड़ी आस्था और विश्वास से भावविभोर होकर उपवास और व्रत रखकर शिव की कृत्रिम प्रतिमा पर चढ़ाते हैं, उसकी षोडशोपचार पूजा करते हैं। आश्चर्य तो इस बात का है कि आज सारा हिन्दु समाज इस भूल-भूलैया में पड़ा हुआ है। इस शिवरात्रि का दूसरा पक्ष यह भी है कि इसी पद्धति के अनुसार आज से 177 वर्ष पूर्व एक अद्वितीय वेदोद्धारक , आजन्म ब्रह्मचारी, परम सारस्वत, प्रबल सुधारक, ज्ञान ज्योति प्रसारक, युगप्रवर्तक, आर्ष शिक्षा पद्धति के उद्धारक, ईश्वर के अनन्य भक्त, देव दयानन्द की दिव्य दृष्टि और उनकी सूझ-बूझ और मानयता के आधार पर यह शिवरात्रि का पर्व अपना विशेष महत्त्व रखता है। इस शिवरात्रि का सम्बन्ध महान् क्रान्तिकारी, आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द से भी है। इनका जन्म सौराष्ट्र के मौर्वी राज्यान्तर्गत टंकारा उपनगर में सन् 1824 ई. को हुआ था। ये जन्मना औदीच्य ब्राह्मण थे। इनके पिता परम शैव थे, शिव के उपासक थे। उसी परम्परा के आधार पर 14 वर्षीय बालक मूलशंकर को भी पिता के आदेशानुसार इसी शिवरात्रि का व्रत और पूजन आदि कुल क्रमागत विधि विधानपूर्वक करने के लिए शिवालय में जाना पड़ा और सत्य शिव की खोज में तन्मय होकर वह उस समस्त दृश्य को बड़े आदर भाव से रखतेरहे। किन्तु अर्धरात्रि के पश्चात सभी उपासक शिव भक्तों को निद्रा देवी ने अपने पाश में ऐसा बांधा कि सब पूजा का सामान इधर-उधर होता हुआ न देख सके। नींद के झोंकों ने सभी भक्त समुदाय को अपनी गोद में सुला लिया और एक अभूतपूर्व आनन्द का सुखपूर्वक रसास्वादन करने लगे। किन्तु सच्चे शिव का उपासक एकमात्र होनहार बालक मूलशंकर इस समस्त क्रियाकलाप को जो वहां इस काल्पनिक शिव की ब्रह्ममयी प्रतिमा पर हो रहा था। उसे देखकर वह एक महान् असमञ्जस एवं आश्चर्य में पड़ गया और बड़ी गम्भीरता से उस सब दृश्य को अपने ज्ञान चक्षुओं से एकटक देखता रहा और मन ही मन उसकी वास्तविकता पर ऊहापोह करता रहा पर इस गुत्थी को सुलझा न सका। तब उसने अन्ततः विवश होकर भयभीत होते हुए वास्तविकता को जानने के लिए अपने पूज्य पिताजी को जगाया और उनके सम्मुख वह कौतूहल पूर्ण दृश्य प्रस्तुत किया। पिता जी उनकी शंकाओं का समाधान करने में असमर्थ रहे और उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर सके। बालक मूलशंकर उनकी सभी उक्तियों को सुनता रहा। उसी समय उन्हें यह आभास हुआ कि वास्तविक शिव तो कोई और ही है जो इस पाषाणमयी जड़मूर्ति से भिन्न कोई चेतन सत्ता है। यह कैसा शिवशंकर है, पशुपति महादेव है। यह तो अपनी रक्षा करने में भी सर्वथा असमर्थ है, अशक्त है तो यह दीन-दुखियों की, असहायों की, शरणागतों की और अपने भक्तों की रक्षा कैसे कर सकेगा।

इसी दृश्य ने, एक चूहे की लीला ने उन्हें विवश किया कि वह सत्य शिव की खोज करने में अपने जीवन को अर्पण कर दे और वास्तविक शिव के दर्शन करे। उनकी ज्ञानाग्नि ने उसे पिता के थोथे आदेश का पालन करने से सर्वथा मुक्त कर दिया। उसने उसी क्षण संकल्प किया और दृढ़ निश्चय किया कि लक्ष्यं वा साधयेयम्, शरीरं वा पातयेयम् बस पिता माता के समस्त पारिवारिक जनों के मोह माया को त्याग कर सच्चे शिव की खोज में निकल पड़े। यही शिवरात्रि आज की घटना से केवल शिवरात्रि न रहकर दयानन्द बोध रात्रि के नाम से सर्वत्र आर्य जगत् में प्रसिद्ध हुई। तभी से शिवरात्रि का यह वैदिक स्वरूप जनता के सामने आया और भ्रान्त जनता को वास्तविक शिव के दर्शन की एक प्रेरणा मिली। महर्षि दयानन्द ने शिवरात्रि से बोध प्राप्त करके सच्चे शिव की खोज में अपने जीवन में अनेक बार साक्षात् विषपान किया है। महर्षि दयानन्द ने संसार में प्रचलित कुरीतियों का, पाखण्ड का, अनेक काल्पनिक मत-मतान्तरों का, संसार में व्याप्त बहु देवतावाद का, ईश्वर के नाम पर विभिन्न स्वरूपों में परिणत होने वाले अनेकानेक भगवानों का विरोध किया और एक नया वेद का आलोक प्रदान किया उसी को सर्वश्रेष्ठ ज्ञान का आदिस्रोत स्वीकार किया और स्वतः प्रमाण माना। ऋषि दयानन्द सदा सत्य की खोज में लगे रहे। वे जीवन भर सत्यपरायण, कर्त्तव्यनिष्ठ , ईश्वर विश्वासी, परम आस्तिक, अनाथ रक्षक, नारी उद्धारक , वेदों के अनन्य भक्त, समाज सुधारक, स्वतन्त्रता के समर्थक, स्वराज्य के प्रबल पोषक प्राचीन आर्ष शिक्षा प्रणाली के पुनरूद्धारक रहे। उन्होंने समस्त राष्ट्र को एक नया दृष्टिकोण दिया, नया आलोक दिया। जो कार्य पूर्ववर्ती महात्मा बुद्ध, आचार्य शंकर आदि नहीं कर सके वह कार्य महर्षि दयानन्द जी ने कर दिखाया और अपनी वैदिक सभ्यता, संस्कृति की, उसके उच्चतम सत्य सिद्धान्तों की पुन= प्रतिष्ठा की, उनको जागृत किया।

आओ इस पुण्य पावन पर्व के सुअवसर पर हम भी कुछ बोध प्राप्त करें और कुछ व्रत ग्रहण करें, जिससे देश की रक्षा में समाज सुधार में अपना सक्रिय योगदान दे सके और ऋषि के ऋण से उऋण हो सकें। महर्षि दयानन्द की भांति हम भी सच्चे शिव के उपासक बनकर, आस्तिक होकर वेदों का स्वाध्याय करें।

thearyasamaj.org

श्रीमद् दयानन्द-प्रकाश

वैराग्य काण्ड

पहला सर्ग

स्वामी दयानन्द जी एक आदर्श संन्यासी थे। उत्तम कोटि के संन्यासी जन कभी अपनी आश्रम-मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करते। इसलिये स्वामी दयानन्द जी पूर्वाश्रम का अपना और अपने बन्धुओं का नाम निर्देश करने में मौन ही रहा करते थे। वे गुर्जर देश में गये। काठियावाड़ में भी पधारे। राजकोट में उन्होंने अनेक व्याख्यान दिये, परन्तु पूर्वाश्रम के सम्बन्धियों का नाम और ग्राम नहीं बताया।

माता-पिता आदि परिवार-परिजन का परिचय देने में वे इसलिये सकुचाते थे कि गुर्जर देश-वासियों में मोह विशेषता से होता है। पता लगने पर बन्धुवर्ग का बार-बार मिलना, घरेलू काम धन्धों की चर्चा चलाना और संयोग-वियोग की वार्ता बताना ये कुछ ऐसे साधन हैं जिनसे समदृष्टि संन्यासियों में आत्मीय जनों के लिये स्नेह-स्रोत का स्राव करने लग जाना सम्भावित होता है। ऐसा होने से उस महापुरुष के महोपकारार्थ धारण किये महाव्रत में बड़ी बाधा पड़ जाने की आशंका थी।

भक्त अल्काट आदि सज्जनों ने उनसे साग्रह प्रार्थना की कि भगवन्, भारत अमेरिका और योरुप निवासी आप के शिष्य और सेवक आपके मंगल-मय जीवन की मंगल कथा जानना चाहते हैं। कृपया अपने जीवन के मुख्य मुख्य अंश लिखकर हमारे पत्र थियासोफिस्ट में प्रकाशित कराइए।

महाराज ने उनके कथन को स्वीकार किया और अपने जीवन के कुछ एक मोटे मोटे भाग लिखा कर थियासोफिस्ट में छपने के लिए भेजे। उनमें उन्होंने अपने जन्म देश का इतना ही वर्णन किया है कि मेरा जन्म मच्छुकांटा नदी के किनारे मोरवी-राज्य के एक कस्बे में ब्राह्मण कुल में सम्वत् १८८१ में हुआ था। मेरे वंशीय उदीच्य ब्राह्मण हैं। मेरे पिता को पुष्कल भूमिहारी थी। उनको मोरवी-राज्य से अधिकार भी प्राप्त थे। वे अच्छे सत्ताधारी थे और प्रबन्ध को स्थिर रखने के लिये कुछ सैनिक भी रखते थे।

प्रातः स्मरणीय स्वर्गीय धर्मवीर श्री लेखराम जो अपनी खोज के पश्चात इस परिणाम पर पहुंचे थे कि महाराज का जन्म स्थान काठियावाड़ देश में मोरवी नगर है। परन्तु श्री देवेन्द्रनाथ जी ने राजसहायता से ६ मास तक परिश्रम करके यह निश्चित परिणाम निकाला कि श्री स्वामी दयानन्द जी का जन्म स्थान मोरवी राज्य में टंकारा ग्राम है। उनके पिता का नाम कर्षनजी था। कर्षनजी बड़े भूमिहार थे और लेन देन का भी काम करते थे कर्षनजी के ज्येष्ठ पुत्र [दयानन्द] का नाम मूल जी था। मूल जी को लोग दयालजी भी कहकर पुकारा करते थे। अध्यापक श्री रामदेवजी ने भी अपनी ढूँढ खोज से श्री देवेन्द्रनाथ मुखर्जी के निश्चय ही को सुनिश्चित किया है।

उक्त परिणाम को इस समय प्रमाण रूप मानकर यह कहना पड़ता है कि श्री दयानन्द जी का जन्म एक परिवर्तन के युग में हुआ। उस समय भारत में बड़ा भारी विप्लव हो रहा था। राष्ट्रीय शक्ति किसी सुदृढ़ नीति सूत्र में आबद्ध न थी। मुगल राज्य का मंगल ग्रह म्लानमुख हो चुका था। राजपूताने की समर शालिनी शक्ति परिश्रान्त होकर अपने ही मरुस्थलों और पहाड़ियों के कोड में कभी की सो गई थी। उन दिनों महाराष्ट्र का महाबल नीति निपुण अंग्रेजों के दल बल से टक्कर ले रहा था। पेशवा और सिन्धिया शक्ति की स्वतंत्रता का तारा अस्ताचल की ओट में हो रहा था। नैपाली सैनिक संग्राम भूमि को उत्तेजित करने के अनन्तर अपनी पर्वत-मालाओं में जा रहे थे।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी शासन के प्रतिनिधि लार्ड एम्हर्स्ट, भारत के कई विभागों के भाग्य की बागडोर अपने हाथों में लेकर शासन कर रहे थे। इसी काल में ब्रह्म देश की स्वाधीनता का सूर्य अशुभ सूचक चिन्हों से घिर रहा था। उसके अस्त हो जाने के पल, उसके पास ही आकर उपस्थित हो गये थे।

पंजाब के केसरी श्रीमन्महाराजा रणजीत सिंह जी अपने सिंह-नाद से हिमालय के कुछ विभागों-समेत शतद्रु से लेकर सिन्धु महानद के तटों तक सारे पंजाब प्रान्त को प्रतिध्वनित कर रहे थे। उनके दहाड़ने से अफरीदियों और मसूदियों की कन्दरायें भी काँपने लग जाती थीं।

उस समय देश में अशान्ति के चिन्ह जहां-तहां दिखाई दे रहे थे। इसीलिए देशवासी प्रायः भय से शंकितचित्त काल व्यतीत करते थे। लुटेरों के अत्याचार विशेष करके असह्य हो गये थे। उनके त्रास से लोग काँप उठे थे। उस समय की सामाजिक दशा भी अत्यन्त शोचनीय थी। भारत भूमि अनेक कुरीतियों से कण्टकाकीर्ण हो गई थी। सैंकड़ों चितायें अबलाओं की सजीव देहों से धधक रही थीं। परस्पर ईर्ष्या, द्वेष और जाति विद्रोह ने घोर-तम रूप धारण किया था। जन-शिक्षण की आवश्यकता का अनुभव करके अधिकारी और नेतावर्ग उसकी पद्धति पर परस्पर विचार कर रहे थे। ईसाई धर्म के पादरी लोग आर्यावर्त को ईसाई बनाने के लिए सर्वथा सुसज्जित होकर आ रहे थे। उस समय ईसाई सेना ने गंगा और सागर के समीपवर्ती स्थानों में अपने दुर्ग निर्माण करके कुछ एक ऐसे प्रारम्भिक शस्त्रपात किये थे कि जिनसे पौराणिक धर्म की अवस्था डाँवाडोल हो रही थी। प्रारम्भ में पादरी लोग लोक-शिक्षा और धर्म-दीक्षा दोनों का प्रचार करते थे। इससे उनके कार्य का प्रभाव दिन पर दिन अधिकाधिक होता जाता था। राज-धर्म वैसे ही प्रलोभन पूर्ण, आकर्षणकारी होता है, परन्तु जब उसके साथ लोक-हित की बात भी मिल गई तो वह नव-शिक्षितों और पश्चिमी सभ्यता में दीक्षितों को एक एक करके अपने मन्दिर में प्रवेश कराने लगा।

आर्य जाति के करोड़ों मनुष्य धर्म ग्रन्थों को पढ़ना तो कहाँ

thearyasamaj.org

उनके सुनने के भी अधिकारी नहीं समझे जाते थे। कुसंस्कारों का इतना प्राबल्य था कि विदेश गमन, समुद्र यात्रा और विदेशी के स्पर्श आदि से ही लोग जाति पतित किये जाते थे। इससे भी अधिक भारत वर्ष में चारों ओर अविद्या और अंधेरी रात राज्य करती थी। आर्य जाति की रीति नीति का आकाश-पश्चिमी सभ्यता की घनघोर घटाओं से आक्रान्त हुआ जाता था। नवीन संस्कारों की झंझावात, पुरातन चाल ढाल, आचार विचार के प्रत्येक पेड़ को जड़ से कम्पित कर रही थी। इस पर, नवीन धर्म की उक्तियों की बाण वर्षा आर्य धर्म के मूलाधार स्थल को पोला करने के प्रयत्न में थी परन्तु भारतवासी किंकर्तव्य विमूढ़ होकर आलस्य की गहरी निद्रा में निमग्न हो रहे थे। कहीं कहीं इस घटाटोप में ब्रह्म विद्या की विद्युत रेखा चमक जाती थी, नहीं तो भारत के भविष्य पर निराशा का गहरा परदा पड़ा हुआ था।

इस अवस्था की विद्यमानता में सम्वत् १८८१ में एक सम्मानित समृद्ध गृह को स्वामी दयानन्द के प्रकाश ने प्रकाशित किया।

पहले पुत्र की प्राप्ति से माता पिता का हृदय प्रसन्नता के पूर से प्लावित हो गया। संपूर्ण परिवार में आनन्द मनाया जाने लगा। उत्सव के बाजे बजने लगे और चारों ओर से नगरवासी तथा बंधु परिजन बधाई देने लगे। स्वामी दयानन्द के पिता ने, अपने यहाँ की मर्यादा के अनुसार, अपने पुत्र के जात-कर्मादि संस्कार क्रमशः और विधिपूर्वक किये और इन शुभ अवसरों पर जी खोलकर दान, मान और दक्षिणा से समागत सज्जनों को सत्कृत किया।

बालक दयानन्द माता की प्रेममयी गोद में पिता के प्यारपूर्ण हाथों में, बन्धुजनों के स्नेहसहित लालन पालन में, सुरक्षित अशोकलता और शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की कला की भांति दिनों दिन बढ़ने लगा। जब उनकी आयु पांच वर्ष की हुई तो उन्हें देवनागरी अक्षरों का लिखाना आरम्भ कराया गया। उनके माता पिता आदि वृद्ध बान्धव उनको कुलाचार और कुलरीति भी शनैः-शनैः सिखाने लगे बड़े बन्धुजनों ने उनको बहुत से स्त्रोत, मंत्र, श्लोक और उनकी ठीकायें कण्ठस्थ करा दीं।

आठवें वर्ष में स्वामी दयानन्द का यज्ञोपवीत संस्कार यथाविधि बड़े समारोह और महोत्सवपूर्वक कराया गया। उनको गायत्री और सन्ध्या की उपासना विधि सिखाई गई। उनके पिता यद्यपि उदीच्य वशीय होने से साम-वेदान्तर्गत थे। परन्तु इनको उन्होंने रुद्राध्याय की शिक्षा के अनन्तर यजु-वेद संहिता पढ़ानी आरम्भ की। श्री दयानन्द के सभी सगे सम्बन्धी शैव थे। विशेष करके उनके पिता तो पक्के शिवोपासक थे, इसलिए वे दयानन्द को शिवोपासना में प्रवीण करने की चेष्टा करने लगे। इन पर शैव सम्प्रदाय के बहुत से संस्कार डाले गये। इनके पिता शैव सम्प्रदाय के प्रदोष आदि व्रतोपवास करने की प्रबल प्रेरणा किया करते, और कहा करते कि मिट्टी की शिव-पिण्डी बनाकर उसका प्रतिदिन पूजन किया करो।

सम्वत् १८९० अर्थात् दशम वर्ष में दयानन्द साधारणतया पार्थिव पूजा ही किया करते थे, पर उनके पिता चाहते थे कि उनका पुत्र नियमानुसार शिव सम्प्रदाय का पालन करे। उपवास करके कथा सुनता और जागरण करता हुआ वह निष्ठावान् शैव बन जाय। परन्तु माता का मोह भी कोई वस्तु होता है। दयानन्द की माता अपने प्यारे पुत्र को क्षुत्पिपासा पीड़ित, कष्टदायक क्रियाकलाप से व्याकुल चित्त देखना नहीं चाहती थी। इसीलिए वह अपने पति से साग्रह कहा करती थी कि यह सुकोमल बालक ऐसे कष्ट-दायक व्रतोपवासों के योग्य नहीं है। इससे भूख नहीं सही जाती। परन्तु स्वामी दयानन्द के पिता बड़ी धारणा के धनी थे। वे उनको शिवोत्सवों में और कथादि में सर्वत्र संग ले जाया करते और समझाते कि शिवोपासना सर्वोत्तम है।

इसी प्रकार जब श्री दयानन्द जी १८९४ में चौदह वर्ष की आयु को प्राप्त हुए तो उस समय यजुर्वेद-संहिता उनके कण्ठ हो गई थी। अन्य वेदों का भी उन्होंने कुछ कुछ अभ्यास कर लिया था। व्याकरण के भी शब्द रूपावली आदि छोटे छोटे ग्रन्थ पिता जी से पढ़ लिये थे। इसी वर्ष स्वामी जी के पिता ने उनको शिवरात्रि का व्रत रखने की आज्ञा की परन्तु वे ऐसा करने के लिए उद्यत न हुए। तब उनको इस व्रत के माहात्म्य की कथा और उससे होने वाले स्वर्गसुखों के वर्णन सुनाए गये, जिससे उनके हृदय में व्रत करने के लिये रुचि उत्पन्न हो गई। वे प्रतिदिन कुछ प्रातराश किया करते थे, इसलिये उनकी माता आग्रह से कहती थी कि इसको उपवास न कराओ। इससे उपवास न निभेगा। यदि हठ से निभा भी लिया तो रुग्ण हो जायेगा। परन्तु उनके पिता ने एक न मानी, और बोले कि कुल धर्म के अनुसार व्रतादि रखकर शिवार्चन अवश्यमेव करना चाहिए। इस प्रकार स्वामी जी को व्रतोपवास की अनिवार्य आज्ञा दी गई।

दूसरे देशों की रीति से भिन्न काठियावाड़ में फाल्गुन के स्थान यह व्रत माघ वदी १४ को होता है। उस दिन सायं समय ही श्री दयानन्द जी को समझाया गया कि आज रात भर तुम्हें जागरण करना होगा। ऐसा न करोगे तो व्रत निष्फल हो जायेगा। पूजन प्रकार भी इन्हें बता दिया गया। इस रात्रि को, नगर के बाहर एक बड़े शिवालय में नगर के सर्वसाधारण भक्त और प्रतिष्ठित जन जाकर व्रतपूर्वक पूजापाठ, जप और जागरण किया करते थे। स्वामी जी के पिता भी उनको इसी मन्दिर में ले गये, स्नानादि करके शुचिवदन, रेशमी धोतियां धारण किये, भाल पर विभूति रचाये, हाथ में शुद्धोदक पूर्ण कलश और पूजा की सामग्री लिये शैव भक्तों की मण्डलियां एक एक करके सायं समय मन्दिर में प्रवेश करने लगी। मन्दिर-प्रवेशिका में लटके हुए अति गुरु घन्टे को जब भक्तों ने हर हर बम्म बम्म महादेव कहते हुए संचालित किया तो उसका ''टन टन'' नाद शिवालय से भी ऊंचा होकर शिवरात्रि-जागरण की सारे नगर में उद्घोषणा करने लगा। सुरीले स्त्रोतों से मन्दिर निनादित हो रहा था। दीप से सर्वत्र जगमगाहट थी। धूप की सुगन्धि का पूर सारे शिवालय को पूर्ण करके बाहर के वायु को भी वासित कर रहा था। लोगों ने प्रथम प्रहर की पूजा बड़े भाव और भक्ति के साथ समाप्त की। दूसरे प्रहर की पूजा में यथा तथा से काम लिया गया। परन्तु रात्रि के तीसरे प्रहर के प्रारम्भ होने पर लोगों की आंखें मिचने लगीं, और वे लगे ऊंघ में झूलने। निद्रा देवी की माया ने सबको मूर्च्छित करके जहाँ तहाँ सुला दिया। सबसे प्रथम जो किसी को निद्रा आई तो वे थे स्वामी जी के पिता। पुजारी लोगों ने जब देखा कि सारे भक्त सो गये हैं और आनन्द से खर्राटे ले रहे हैं तो वे भी धीरे-धीरे मन्दिर के बाहरी भाग में जाकर निद्रा में लीनता लाभ करने लगे।

ऐसे गम्भीर, निस्तब्ध, नीरव, सुनसान समय में उस शोभन शिवालय की ऊपर की छत को चारों ओर की दिवालों को, समतल

thearyasamaj.org

भूमि को और पूजो-पहार सहित शिव-पिण्डी को दो ही ज्योतियां प्रकाशित कर रही थीं-एक तो मन्दिर दीपक की ज्वलन्त बत्ती और. दूसरे जागरूक दयानन्द की उज्जवल चित्तवृत्ति। दीपक की बत्ती ग्रहण शक्तिरहित है, ज्ञान-शून्य हैं, किसी घटना का परिणाम निकालने में असमर्थ है, वह केवल उजाला ही उगल सकती है, कदाचित बुझने लगे तो अपने बताने का उसके पास कोई उपाय नहीं। परन्तु दयानन्द की चमत्कारिणी चित्तवृत्ति ज्ञानवती और ग्रहणशक्ति-सम्पन्न है। उसमें अतुल त्वरा से घटना के परिणाम पर पहुंच जाने का सामर्थ्य है। श्री दयानन्द जी पर जब निद्रा का आक्रमण होता और उनकी आँखें झिपने लगतीं तो वे नेत्रों पर ठण्डे पानी के छींटे दे देकर अपने आपको सावधान और सचेत करते। उन्हें भय था कि आंखें लग जाने से ही व्रत निष्फल न हो जाय। पर उनका चित्त आश्चर्य से चकित हो गया, जब उन्होंने देखा कि शिव-पिण्डी पर अपवित्र क्षुद्र चूहे कूद-कूद कर और उछल उछल कर चढ़ते हैं और उस पर चढ़ाया हुआ भक्तों का पूजोपहार बड़े आनन्द से खा रहे हैं। जिस प्रकार मेघमाला में रह कर विद्युत की रेखा फिर जाती है, और जिस प्रकार वायु से ताड़ित महासागर में ऊंचे ऊंचे तरंग उठते हैं वैसे ही दयानन्द के चिदाकाश में इस घटना से संचलित विचार और प्रश्नों के तारे एक एक करके चमचमा उठे। शंकासमाकुल हृदय में उन्होंने सोचा कि शिव-कथा में तो मैंने सुना है कि शिव त्रिशूलधारी हैं, उनका वाहन वृषभ और निवास कैलाश है, वह मनुष्याकार धारी देवता, डमरु बजानेवाला अस्त्र सम्पन्न, और वर-शाप प्रदान में समर्थ परब्रह्म है ! वह पाशुपतास्त्र से दैत्यों का संहार करता है, तो क्या वही महादेव यह मूर्ति हो सकती है ? अहो ! इसके सिर पर तो ये अपावन प्राणी चूहे दौड़ लगा रहे हैं, इसके चढ़ावे को बड़ी निर्भयता से खा रहे हैं। इसमें तो इन तुच्छ जीवों को भगाने का भी बल नहीं ? यह महादेव कैसा ?

दूसरा सर्ग

बहुत देर तक उन्होंने इस आन्दोलन को अपने भीतर रखे रखा। परन्तु उस दिव्य ज्योति ने, जो अन्तरात्मा में स्वभावत: और सहसा संघर्षित हो उत्पन्न हुई थी, उस दिव्य वाणी ने जो उन्होंने अन्त:करण के कानों से श्रवण की थी, उन्हें बलात्कार से उत्तेजित किया कि वे अपना हार्द पिता के समक्ष प्रकाशित करें।

श्री दयानन्द जी ने अपने पिता को जगाकर बिना झिझक अपने शंका-समूह को उनके सम्मुख उपस्थित कर दिया और विनय की कि जिस देव का वर्णन मुझे सुनाया गया है क्या उसके समान ही यह मन्दिर की मूर्ति है ? अथवा चूहों से अवहेलना प्राप्त यह कोई दूसरी वस्तु है ? पिता ने पुत्र के इन प्रश्नों को सुनकर क्रोध से आँखे लाल कर लीं और भर्त्सनापूर्वक कहा-यह बात तू क्यों पूछता है ? ऐसे शिवाराधन के समय ऐसा प्रश्न क्यों करता है? पर जिस महात्मा को अकस्मात् [illegible] हो गई थी, जो साधारण घटना से असाधारण प्रबोध का धनी हो चुका था, उसके लिए पिता की कोरी झिड़की प्रश्न का उत्तर न हो सकी। जिसको बोलने के लिए आत्मा प्रेरणा कर रहा था उसका मुख डांट डपट से बन्द न हुआ। दयानन्द निर्भीक भाव से बोले 'पिता जी जिस महादेव की कथा मुझे सुनाई गई है, वह तो गुणों से चेतन प्रतीत होता है, यदि यह मूर्ति वही महादेव होता तो भला इन भ्रष्ट महामलीन मूषकों को अपने ऊपर क्यों चढ़ने देता। चूहे उसके शरीर पर सपाटे से दौड़े फिरते हैं और यह शिर तक नहीं हिलाता, और न इन घृणित जन्तुओं के स्पर्श से ही अपने को बचाता है। इस अचेतन महादेव से मैं उस सर्वशक्तिसम्पन्न चेतन परमेश्वर को समझना असम्भव समझता हूं, यही भेद जानने के लिए आपको जगा कर प्रश्न पूछा है।

पुत्र के इन अश्रुतपूर्व प्रश्नों को सुन पिता ने गम्भीरता से समझाना आरम्भ किया-''पुत्र ! इस कलिकाल में महादेव के साक्षात् दर्शन नहीं होते, इसलिये उसी कैलाशवासी शिव की मूर्ति बनाकर प्राण-प्रतिष्ठा पूर्वक पूजन किया जाता है। इन पाषाण आदि की मूर्तियों को यदि कोई महादेव की भावना से पूजे तो इससे महादेव अपनी पूजा के समान प्रसन्न हो जाता है। 'बेटा ! तेरी तर्क बुद्धि बहुत बड़ी है' यह सत्य है कि ''यह तो केवल देवता की मूर्ति है, साक्षात् देवता नहीं।''

इस पितृ उपदेश से दयानन्द की सन्तुष्टि नहीं हुई। उनकी मूर्ति पूजन से आस्था उठ गई। उन्होंने पिता के वचनों को एक पर्चावा मात्र, गोल-मोल बात से टाल देना ही समझा। उसी समय से उन्होंने दृढ़ संकल्प कर लिया कि जब चेतन सत्ताधारी शिव को प्रत्यक्ष देखूंगा तब उसका पूजन करूंगा। इन जड़ प्रतिमाओं को कभी भी नहीं पूजूंगा।

बाल्यकाल से ही, श्री दयानन्द की यह प्रकृति थी कि वे सहसा किसी बात को ग्रहण नहीं करते थे। पर जब विचार पूर्वक किसी बात को ग्रहण कर लेते तो ऐसे दृढ़ हो जाते थे कि उसके पालन में, चाहे कैसा भी कष्ट हो, उसे नहीं छोड़ते थे। इसी प्रकार जब ज्ञान से निश्चय हो जाता कि प्रबल हाथों से पकड़ी हुई वस्तु असत्य है, भ्रान्त है, तो तुरन्त, तुच्छ तृणवत् उसका परित्याग कर देते थे। उनके चरित्र के इस चित्र से यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि जब तक शिवरात्रि के व्रतादि में निश्चय नहीं था तो पूज्य पिता की आज्ञा भंग करने पर भी उद्यत हो गये, परन्तु जब कथा-श्रवण से रुचि उत्पन्न हुई तो आधी रात के समय सबके सो जाने पर भी दयानन्द आँखों को जल के छींटे देकर जाग रहा था और जिस समय अन्त-करण के आकाश में सत्य के सूर्य ने अपनी किरण का संचार किया तो उन्होंने अपने पिता को स्पष्ट कह दिया कि मैं इस जड़ मूर्ति से परमेश्वर के विचार प्राप्त करना असम्भव समझता हूं। इतना ही नहीं किन्तु निश्चय बदल जाने के पश्चात् उन्हें प्रतीत होने लगा कि क्षुधा के कारण इतनी देर बैठने से मैं श्रांत हो गया हूं और इससे मुझ में दुर्बलता आ रही है। अब मन्दिर में बैठे रहने का कोई प्रयोजन न रहा, इसलिये उन्होंने पिता से घर जाने के लिये पूछा। पिता ने पुत्र की बुद्धि का चमत्कार अभी ही देखा था, इस कारण अनुमति देते हुए यही कहना उचित समझा कि अच्छा घर जाते हो तो अकेले मत जाओ। सिपाही को साथ लेते जाओ, परन्तु भोजन कदाचित न करना।

भाव बदल जाने पर श्री दयानन्द जी को भूखा रहना असह्य भार ज्ञात होने लगा। इसलिये घर जाते ही कहा, माता जी ? मुझे बड़ी भूख लग रही है। माता ने कहा ''बेटा मैं तो तुझे पहले ही से कहती थी कि तू उपवास न कर सकेगा, परन्तु तूने बड़ा हठ किया'' इन वचनों के साथ माता ने, पुत्र को खाने के लिए मिठाई दी और कहा ''तेरे पिता बड़े पक्के शैव हैं। यदि उन्हें व्रत-भंग का भेद ज्ञात

thearyasamaj.org

हो गया तो वह तुझे ताड़ना तर्जना करेंगे, इसलिये उनके पास जाकर अपनी भोजन कथा न बताना।'' भोजन आदि करके कहीं एक बजे के पश्चात दयानन्द सोये, इसीलिये सवेरे आठ बजे के पहले उनकी आंख न खुल सकी। प्रातः काल घर में पदार्पण करते ही दयानन्द जी के पिता को किसी प्रकार उनका भोजन-वृत्त विदित हो गया। वे व्रतातिकण के कारण पुत्र पर अति कुपित हुए, और आवेश में बोले ''तुमने बहुत बुरा काम किया। विनयावनत पुत्र ने स्पष्टवादिता से निवेदन किया कि ''पिता जी ! जब ग्रन्थ-कथित महादेव मन्दिर में था ही नहीं तो मैं एक कल्पित बात के लिए व्रतोपवास का कष्ट क्यों सहता'' इसके अनन्तर उन्होंने अपने प्यारे चचा जी से प्रार्थना की कि अध्ययन के कारण मुझ से पूजोपवास का आडम्बर नहीं निभ सकता। यह बात आप पिता जी को समझा दीजिए।

श्री दयानन्द के चचा और माता जी ने उनके पिता को यह कहकर समझाया कि लड़का पढ़ने में बड़ा परिश्रम करता है। उसे कठोर कर्मकाण्ड में डालना उसके स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होगा। अभी उसे भली-भांति पढ़ने दो। उक्त सम्पूर्ण वार्ताओं को लक्ष्य करके, पिता ने पुत्र के यथा रुचि अध्ययन के लिए प्रसन्नता से अपनी अनुमति का प्रकाश कर दिया अब पूजा पाठ से खुली छुट्टी मिल जाने के कारण श्री दयानन्द जी ने विद्याध्ययन में बहुत अच्छी उन्नति की। अपने स्थान के समीपवर्ती एक विद्वान ब्राह्मण से उन्होंने निघण्टु निरुक्त और मीमांसादि शास्त्र पढ़ना आरम्भ कर दिया, और साथ ही वे कर्म काण्ड की 'स्मार्त' पुस्तकें भी पढ़ा करते थे। इस प्रकार वे सारा समय शास्त्रानुशीलन में व्यतीत करते थे। दो छोटी बहिनें और दो छोटे भाई, ये सब मिल कर श्री दयानन्द जी पाँच बहिन भाई थे। सब बहिन भाई परस्पर सुदृढ़ स्नेहसूत्र सम्बद्ध और गाढ़ अनुराग रञ्जित थे। ऐसे बहिन भाईयों के प्रेममय स्वर्गीय मुखं का अनुभव करते हुए और विद्याध्ययन से अपने अन्त करण के कोश को भरते हुए श्री दयानन्द जी सोलहवें वर्ष को प्राप्त हुए।

सम्वत् १८९६ विक्रमी में जब वे सोलहवें वर्ष को अतिवाहित कर रहे थे तो एक रात उन्हें अपने बन्धुओं सहित एक इष्ट मित्र के यहां नृत्योत्सव में जाना पड़ा। उत्सव को आरम्भ हुए अभी बहुत देर न हुई थी कि श्री दयानन्द के घर से एक नौकर बड़े वेग से दौड़ा हुआ आया। उसने हांपते हांपते आकर समाचार दिया कि उनकी चौदह वर्षीया छोटी भगिनी को विशूचिका हो गई है। इस समाचार ने दयानन्द और उनके कुटुम्बियों पर वज्रपात किया। वे सब वहां से उठ तुरन्त घर पहुंचे सारा परिवार रोगिनी की सेवा-शुश्रुषा में लग गया। वैद्य लोग अपने सारे विद्या बल से चिकित्सा कर रहे थे, पर रुग्णा की दशा पल पल में शोचनीय होती गई। उस आसन्नमरणा कुमारी के सुकोमल तन को, मतहस्ति द्वारा उत्पाटित और प्रखर आतप द्वारा तापित कमलिनी के सदृश कुम्हलाते और क्षण-क्षण में मूर्छा खाते देख पास खड़ी ममतामयी माता का कलेजा काँप उठा, पिता व्याकुल चित्त हो गया, सब पर उदासीनता छा गई और सारे परिवार की आँखें डबडबा आईं। लाख यत्न किये, बहुतेरा बल लगाया पर 'कर्मगत टारी नाहिं टरे।' अन्ततः सकल सम्बंधी समूह की उपस्थिति में, चार घण्टों के भीतर ही, भाई बहिनों की स्नेहलता सदा के लिये सूख गई, माता-पिता की प्रिय पुत्री के प्राणपँखेरू उड़ गये, कुलदीपिका, अकाल ही में काल की विकट वायु से शान्त हो गई।

जिस समय इस दुःखद दुर्घटना से सकल परिवार के नेत्रों से अविरल अश्रुधारायें बह रही थीं, रोने पीटने से हाहाकार मचा हुआ था, रो रोकर हिचकियाँ लेते लेते माता की घिघी बँध गई थी और सर्वस्नेही वर्ग पर शोक का सागर उमड़ आया था, उस समय एक दयानन्द ही था जो मृता भगिनी की शय्या के समीपवर्ती दिवाल से लगा हुआ अश्रुविहीन नेत्रों से चुपचाप प्यारी बहिन के शव को एकटक देख रहा था। उसके चित्त की गहरी चिन्ता को न पहचानकर बन्धुओं ने उस पर बहुतेरे कटुकटाक्ष किये पिता ने पाषाण-हृदय कहा, यहाँ तक कि सदा प्रेम प्रदर्शित करने वाली माता ने भी यही शब्द दुहराये, परन्तु दयानन्द के सन्मुख उस घटना ने एक ऐसी समस्या उपस्थित कर दी थी कि जिसकी पूर्ति के लिए उनका चित्त चंचल हो उठा था।

जैसे वायु का तीव्र वेग नौका के मुख को फेर देता है, जैसे विशाल चट्टान से टक्कर खाकर नदी का बहाव बदल जाता है, ऐसे ही इस अदृष्टपूर्व घटना को देख कर श्री दयानन्द की चित्तवृत्तियां अपने क्लिष्ट प्रवाह को क्रमशः बदलने लगीं। विद्युत् ताप से कम्पित मनुष्य की भाँति भयभीत दयानन्द सोचने लगे अहो ! मेरी बहिन की तरह सभी लोग एक एक करके अवश्यमेव विकराल काल के गाल में ग्रास बनेंगे। निश्चय मुझे भी उसी मार्ग का अनुसरण करना पड़ेगा। मृत्यु ऐसी अवश्यम्भावी है कि इससे, छोटा बड़ा कोई भी जीव बच नहीं सकता। हा !! यह असह्य वियोग-वेदना सबको सहनी होगी। यह दुर्दिन जीवमात्र को देखना होगा। सचमुच, यह जीवन क्षण-भंगुर है, जलबुद्बुद्वत् चंचल है, संध्या राग की भाँति अस्थिर है, पलाश पत्र पर पड़े ओस कण की तरह चलायमान है। तब तो कोई ऐसा उपाय करना चहिए जिससे जन्म मरण के दारुण दुःख से मुक्ति लाभ हो, अमर जीवन की उपलब्धि हो।

दो अरणिकों के मंथन से जैसे अग्नि उत्पन्न हो आती है, उचित वस्तुओं के मिश्रण और संघर्षण से जैसे विद्युत् बहाव बह निकलता है ऐसे ही मृत्यु घटना से संचालित दयानन्द-चित्त में, चिरकाल के निरन्तर चिन्तन रूप संघर्षण से विवेक विद्युत् की रेखा का उदय हो गया-वैराग की ज्वलन्त ज्वाला उछलने लगी, जिसने प्रकट होते ही दयानन्द की चित्त भूमि से सांसारिक वासनाओं के घास-पात को भस्मसात् करना आरम्भ कर दिया।

कुल की रीति के अनुसार पाँच दिन तक सहानुभूति करने वाले लोग आते जाते रहे और घर में रोना-धोना बना रहा, परन्तु दयानन्द के हृदय-स्त्रोत को मृत्यु के भय और वैराग्य की आग ने इतना शुष्क कर दिया था कि लोगों के धिक्कारने पर भी उनकी आँख गीली नहीं हुई। वे रात दिन चुप्पी साधे अपनी चिन्ता में चूर रहते। बड़ी रात बीत जाने पर जब वे न सोते तो उन्हें बन्धुजन सोने के लिए प्रेरणा करते, परन्तु भला इतनी चिन्ता, इतनी अशान्ति में नींद कहाँ ! बिछोने पर पड़े बार बार चौंक पड़ते। इस मृत्यु व्याधि के नाश की औषधि कहाँ मिलेगी ? अमर जीवन के लिए कौन से उपायों का अवलम्बन करना चाहिए ? मुक्ति मार्ग में किस का भरोसा किया जाय ? इत्यादि विचारों में वे रात दिन निमग्न रहते। अन्त में दयानन्द जी ने यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि जैसे भी हो, मुक्ति हस्तगत करूंगा और मृत्यु के दुख से छुटकारा पाऊँगा, इस

thearyasamaj.org

धारणा के साथ ही उनके मन से संसार का अनुराग दूर हो गया, उनका चित्त स्वस्थ हो गया, और उसमें उत्तरोत्तर उत्तम विचारों की उन्नति होने लगी।

महात्माओं के महत्व को सम्पादन करने वाली प्राय: घटनायें ही हुआ करती हैं। बुद्धिदेव को भी मृतक की ऐसी ही एक घटना देखकर वैराग्य उत्पन्न हुआ था, परन्तु उपर्युक्त घटना से जो वैराग्य दयानन्द को हुआ, विरक्ति की जो आग उनके भीतर प्रकट हुई, उसमे एक विशेषता थी। वह यह, उन्होंने उसी समय धारणा कर ली कि चाहे जो हो, मैं अब इस वैराग्य-अग्नि पर सांसारिक स्नेह और सांसारिक सम्बंध का गीला ईंधन और हरी घास डाल कर इसे धूमायमान नहीं बनाऊँगा। परन्तु इन विचारों को उस समय प्रकट करना उचित न जान कर वे अपने पढ़ने लिखने में यथा पूर्व लगे रहे।

सम्वत् १८९९ श्री दयानन्द जी की आयु का उनीसवां वर्ष था। इस वर्ष में उनसे अति प्रेम करने वाले उनके धार्मिक तथा विद्वान् चचा विशूचिका महा रोग के चंगुल में फंस गये। बहुत उपचार किये पर एक भी सफल न हुआ अपने परम प्रिय और पूज्य चचा को भयंकर रोग से पीड़ित देख दयानन्द का हृदय दुख से विदीर्ण हुआ जाता था। जिस समय काल महासागर में रोगी की डूबती हुई नाड़ी नौका को बन्धु-बान्धवजन उंगलियों से टटोल रहे थे, उसी अन्त समय में प्रियमाण चचा ने अपने भतीजे दयानन्द को समीप बुला कर बैठने का संकेत किया। आरम्भ काल से, प्रयत्न पूर्वक लालित पालित अपने प्रेम-पात्र भ्रातृ पुत्र से सदा की विदाई लेते समय उनकी आँखों से आँसू टपटप करके गिर पड़े। उनकी यह दशा देखकर दयानन्द अधीर हो गये, और करुणा बन्धन करते हुए फूट फूट कर रोने लगे, यहां तक कि रोते रोते उनकी आँखें भी सूज गईं। उन्होंने अपने सारे गत जीवन में इतना रोदन कभी न किया था। यह दूसरी घटना, दयानन्द के वैराग्य-दावानल के संग पवन का प्रसंग था, उनकी संवेग नदी का वेग बढ़ाने में महामेघ का वर्षण था, उनके विरक्ति अग्नि-कुण्ड में घृत धारा का पात था।

उन्होंने देखा कि यह सम्पूर्ण दृश्य असार है। यहां स्थायी कुछ भी नहीं। भावी से खींचे हुए सभी प्राणी काल के गाल में जा रहे हैं और अन्त को मेरी देह भी मरणधर्मा है। अपने इन भावों को उन्होंने माता पिता के सामने तो प्रकट न किया परन्तु इष्ट मित्रों और विद्वत्सज्जनों से जिज्ञासा करने लगे कि अमर पद-प्राप्ति के उपाय बताइये।

पण्डित लोगों ने जिज्ञासु को परमपद-प्राप्ति का उपाय योगाभ्यास बताया। उत्कट लगन से प्रेरित होने के कारण दयानन्द के मन में योगाभ्यास की धुन समा गई। वे मन ही मन कहने लगे कि यह योग घर बार के काम-काज में मोह-ममता के जगड्डवाल में सिद्ध नहीं हो सकेगा, अतएव गृह त्याग कर कहीं चलना चाहिये। इस निश्चय के पश्चात् उन्होंने अपने मित्रों को अपना मनोगत भेद खोलकर बता दिया। उन्होंने कहा ''मैंने यह निश्चित कर लिया है कि यह संसार सार रहित है। इसमें ऐसा कोई पदार्थ नहीं जिसके लिये जीने की इच्छा की जाय, और वास्तव में कोई भी मनोज्ञ वस्तु नहीं जिसमें मन लगाया जाय मैं इसे रसरहित और फीका समझता हूँ।'' इष्ट मित्रों ने यह वार्ता उनके माता-पिता को बता दी।

इतिहासों में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जहाँ दयानन्द जैसे वैराग्यवान् वीरों को स्नेह-बन्धन में बाँधने के लिये, बन्धुवर्ग विवाह श्रृङ्खला को सर्वोत्तम समझते आये हैं। इसी परम्परा प्राप्त पद्धति पर श्री दयानन्द जी के माता पिता आरूढ़ हो गये और लगे शीघ्रता से उनके विवाह का उद्योग करने। उन्होंने स्थिर कर लिया कि बीसवें वर्ष में ही पुत्र का विवाह कर दिया जाय। यह वैराग्य की आग अनुराग की बदली के बरसने पर आप ही शान्त हो जायेगी। श्री दयानन्द जी को जब ज्ञात हुआ कि उनको सदा के लिये जकड़ने के निमित्त, एक प्रबल पाश प्रस्तुत करने का प्रस्ताव हो गया है तो उन्होंने मित्रों द्वारा इसका घोर विरोध किया। इससे विवश हो, उनके पिता को उस वर्ष विवाह-कार्य रोक देना पड़ा।

श्री दयानन्द जी निश्चिन्त नहीं थे। उन्हें भय था कि इक्कीसवें वर्ष के आरम्भ होते ही विवाह की चर्चा फिर चलेगी। उस समय उसका टालना कठिन कार्य हो जायेगा। इसलिए सम्वत् १९०० में बीसवें वर्ष की समाप्ति पर ही उन्होंने पूज्य पिता से प्रार्थना करना आरम्भ कर दिया कि मुझे व्याकरण, ज्योतिष और वैद्यक के ग्रन्थ पढ़ना है। कृपया मुझे काशी जी भेज दीजिये क्योंकि इन ग्रन्थों की पढ़ाई वहीं अच्छी होती है। जो माता पिता यह जानते थे कि पुत्र वैराग्यवान् हो गया है और गृह त्याग के अवसर ढूँढ रहा है भला वे काशी गमन कब स्वीकार करने लगे थे। उन्होंने कहा ''हम तुम्हें काशी कभी न भेजेंगे जो कुछ अध्ययन कर चुके हो वही पर्याप्त है। अधिक पढ़कर क्या करोगे और बहुत पढ़ाकर हमने करना भी क्या है ? तुम्हारे विवाह में और थोड़े दिन शेष हैं। तुमने गृहस्थ बनना है इसलिये काम-धन्धे में जी लगाना सीखो।'' माता ने तो स्पष्ट कह दिया ''बेटा ! मैं अच्छी तरह जानती हूं कि बहुत पढ़े हुए लड़के विवाह करना उचित नहीं समझते। तुम्हारे काशीगमन में भी यही झलक है।'' फिर श्री दयानन्द जी ने पिता जी से तीन बार साग्रह कहा कि काशी में विद्याध्ययन करके जब तक मैं पूर्ण पण्डित न हो जाऊं उसके पहले विवाह होना ठीक नहीं परन्तु माताजी उनके इस आग्रह से उनके काशी-गमन के और भी विरुद्ध हो गईं और कहने लगीं ''हम तुम्हें कहीं नहीं भेजते अब तो बेटा, शीघ्र ही विवाह करेंगे'' यह सोचकर कि अधिक आग्रह करने से कार्य कभी सिद्ध नहीं होता किन्तु बिगड़ जाया करता है, श्री दयानन्द जी चुप हो गये और माता पिता के सामने से टल गये। पुत्र को अन्यमनस्क, उदासीन देखकर पिता ने भूमि सम्बन्धी कार्य करने की आज्ञा दी परन्तु उन्होंने उसे स्वीकार न किया।

वैराग्यवान् श्री दयानन्द जी को घर में एक एक दिन भारी प्रतीत होता था, इसलिये वे फिर कुछ दिनों के बीतने पर पिताजी से बोले 'आपने मुझे काशी जाने से रोका इसमें मेरा कुछ आग्रह नहीं, परन्तु इतना तो मान लीजिये कि यहाँ से तीन कोस पर अपनी जाति के एक वयोवृद्ध बहुत बड़े विद्वान् रहते हैं उन्हीं के पास जाकर पढ़ा करूं।'' वहाँ अपनी भूमिहारी है इसलिये कोई कष्ट भी न होगा। इस बात को पिता जी ने स्वीकार कर लिया, और श्री दयानन्द जी उन प्रशंसित पण्डित जी के पास जाकर पढ़ने लग गये। कुछ काल बीत जाने पर वे एक दिन प्रशंसित पण्डित जी से वार्तालाप कर रहे थे कि बीच में विवाह का प्रसंग छिड़ गया। उस समय दैवयोग से उनके मुख से ये शब्द निकल गये-''मुझको विवाह से ऐसी घृणा है

thearyasamaj.org

कि जो किसी प्रकार मेरे मन से दूर नहीं हो सकती।'' विवाह से घृणा की बात यदि पण्डित जी के पास ही रहती तो उनका पाठ तो चलता रहता, परन्तु श्री दयानन्द जी की पाठशाला से निकलकर उनके पिताजी के कानों तक पहुंच गई। इस पर पिता ने पुत्र को तुरन्त अपने पास बुला भेजा, और शीघ्रता से विवाह का उद्योग करने लगे। श्री दयानन्द जी ने घर आते ही देखा कि उनके विवाह सम्बन्धी वस्त्राभूषण प्रस्तुत हो रहे हैं नाना प्रकार की सामग्री विवाह के लिए एकत्रित की जा रही है। यह सब कुछ देखकर वे भौंचक हो गये। उनका चित्त चंचल हो उठा।

श्री दयानन्द जी के मन में जो वैराग्य समाया हुआ था उसके साथ उनका कोई इष्ट मित्र सम्मत न था। सब उनके विवाह के पक्ष पोशक थे। चर्म-चक्षुओं से अपना कोई सहायक न देखते हुए, वे अपने गम्भीर हृदय सरोवर में गहरी डुबकी लगाकर, मन ही मन विचारने लगे कि मेरे विद्योपार्जन का द्वार अब बन्द किया जाता है। यदि मैं गृह में रहा तो अब मेरे माता पिता मेरा विवाह किए बिना न रहेंगे। ये जितने लोग मेरे विवाह के बाँधनू बाँध रहे हैं, मेरा ब्रह्मचर्य व्रत भंग करना चाहते हैं, मेरा भविष्य बिगाड़ना चाहते हैं। ऐसे सोच विचार के अनन्तर श्री दयानन्द जी ने यह निश्चय कर लिया कि वे कुटुम्बियों के इस कथन पर नहीं चलेंगे, किन्तु अब वह काम करेंगे जिससे जन्म भर के लिये विवाह के बखेड़े से बच जायें। इस मनोरथ को वे किसी पर प्रकट नहीं करते थे किन्तु अनुकूल अवसर का अवलोकन करते थे कि कब इसे पूरा किया जाये। इधर विवाह का उद्योग आरम्भ हुए भी एक मास होने लगा। सारी विवाह-सामग्री वस्तुत हो गई।

तीसरा सर्ग

सारे इष्ट मित्र, बंधुबान्धव और मेली जोली श्री दयानन्द का विवाहोत्सव देखने के उत्सुक हैं। दूरवासी सम्बन्धियों के आने का समय भी समीप आ गया है। एक समृद्धिशाली गृहस्थ का विशाल गृह आंगन स्वच्छ सुसज्जित हो गया है। वस्त्राभूषण सब सजा कर रखे जा रहे हैं। अनेक प्रकार के महोत्सव योग्य भोज्य पदार्थ एकत्र करने के लिये पूरा प्रयत्न किया जा रहा है। पिता सुप्रसन्न हैं। माता के आनन्द की सीमा नहीं। घर के सब छोटे बड़े हर्षित हृदय और प्रफुल्ल वदन हैं। ऐसा जान पड़ता है मानों इस गृह में आज कोई प्रसन्नता का स्त्रोत बह निकला है। सारा परिवार फूला नहीं समाता पर दयानन्द गहरे विचार में निमग्न हैं। उनके मुख मण्डल पर चित्त से उठी हुई चिन्ताओं के मेघ मंडरा रहे हैं। वे विकसित नेत्रों से देख रहे हैं, जाग्रत मन जान रहे हैं कि सामने दृश्यमान संध्याराग जैसे मुहूर्त भर में पश्चिम दिशा के नीलाकाश में लीन हो जाएगा, इसी प्रकार इन सम्बन्धियों की यह प्रसन्नता की लालिमा भी थोड़ी देर पीछे शोककाल की काली घटनाओं में छुप जाएगी।

वह १९०२ का सम्वत् था। उनकी आयु बाईस वर्ष की हो चुकी थी। एक दिन सायं समय उनका मन सम्बन्धियों के ममता-मोह से उठ गया, अनुराग रज्जु आजन्म के लिये टूट गया। उन्होंने यह कहते हुए, ''फिर लौट कर घर न आऊंगा।'' वासना समूह की पूर्णाहुति दे दी, और वे चुपचाप, एकाएक समृद्ध गृह से चल निकले। विवाहोत्सव से सुशोभित धनधान्य पूर्ण गृह को, माता पिता के पूर्ण प्रेम को, सज्जन सम्बन्धियों के सरस स्नेह को, और सबसे बढ़कर यौवन अवस्था के सामने खड़े विकसित अबाध्य बसन्त को सर्वथा परित्याग कर देना-तिलाञ्जलि दे देना श्री दयानन्द की गहरी लगन और तीव्र वैराग्य को, प्रदर्शित करता है। वे घर से इसीलिये निकले कि सर्वथा स्वतन्त्र होकर मृत्यु महारोग की महौषधि ढूंढें, और अमर जीवन प्राप्त करें।

सुनसान रात के समय, अनिश्चित स्थान को एकाएकी जाते हुए नवीन त्यागी दयानन्द के हृदय में क्या क्या भाव उद्भव हुए, उन्हें दो ही सत्तायें जानती हैं। एक तो दयानन्द का अपना अमर आत्मा, और दूसरे प्रभु परमात्मा।

श्री दयानन्द जी ने गृह त्याग की पहिली रात्रि अपने नगर से छः कोस के अन्तर पर व्यतीत की। अभी रात्रि का एक प्रहर शेष था कि वे फिर यात्रा के लिये सन्नद्ध को गये। उन्होंने, सायंकाल से पूर्व बीस कोस पर एक ग्राम में पहुंचकर विश्राम लिया। यहाँ उन्होंने हनुमान के एक मन्दिर में रात्रिकाल बिताया। उन्होंने अपनी यात्रा में चातुर्य से काम लिया। वे प्रसिद्ध मार्ग पर न चलकर एक ऊंचे नीचे विषम पथ से जाते थे कि कहीं कोई जान पहचान वाला सामने से न मिल जाय।

इधर जब माता आदि ने किसी प्रकार जान लिया कि दयानन्द अचानक कहीं चला गया है तो वे भौंचक हो गये। उन पर मानो एक भीषण वज्रपात हुआ। पिता की व्याकुलता का ठिकाना न रहा। जननी जलहीन मीन की भांति तड़पने लगी। बन्धु वर्ग के मस्तिष्कों को उनके हृदय से उछलते हुए शोक-तरंगों ने निमग्न कर दिया। विवाह-सम्बन्धी सारा ठाठ-बाट, साज-सामग्री राग-रंग सहसा फीका हो गया। घर बार, द्वार दिवाल, सब पर उदासीनता छा गई। अन्वेषण-कार्य तुरन्त आरम्भ कर दिया गया। चारों ओर घुड़ चढ़े और पदाति सिपाही दौड़ाये गये। जहां जहां श्री दयानन्द जी के जाने की सम्भावना हो सकती थी वहां वहां खोजने वाले पहुंचे। परन्तु मानसरोवर की यात्रा के लिए, पिंजड़ा तोड़कर निकले हुए राजहंस का कोई भी पता न चला।

श्री दयानन्द जी जिस समय टेढ़े मेढ़े मार्गों से तीसरे दिन की यात्रा कर रहे थे, तो मार्ग में एक राज पुरुष द्वारा उन्हें भी ज्ञात हो गया कि अमुक पुरुष के भागे हुए पुत्र की खोज में कुछ घुड़ चढ़े और प्यादे यहां तक आये थे। यह सुन कर वे और आगे जाने के लिये अग्रसर हुए।

उसी दिन मार्ग में उनको साधु-वेष में एक ठगों का दल मिला उनमें से एक बैरागी बाबा बन कर मार्ग में मूर्ति स्थापित करके बैठा हुआ था। उसने प्रथम तो श्री दयानन्द नवीन यात्री से उसकी यात्रा का कारण पूछ लिया और फिर लगा इनको चिढ़ाने-''देखो त्यागी बनने चला है। हाथ की अंगूठियां तो छोड़ी ही नहीं गईं, वैराग्य सिद्धि क्या धूल करोगे। भला, कभी ऐसे वस्त्राभरण वाले को भी सिद्धि प्राप्त होती है ? इसलिये सारा भूषणालंकार मूर्ति जी के आगे चढ़ा दो। इससे तुम्हें दो लाभ होंगे। एक देवार्चन से पुण्य, दूसरे सर्व-त्याग से वैराग्य-सिद्धि।'' जिस महात्मा ने ऐरावत हाथी त्याग दिया वह उसके बांधने के रस्से से कब स्नेह करने लगा था। उन ठगों के चिढ़ाने से उन्होंने अंगूठियां अंगुलियों से उतार कर उन कपट वेषधारियों के आगे फेंक दीं और अपने मार्ग पर चल पड़े।

पर्यटन करते हुए श्री दयानन्द जी ने लोगों से सुना कि सायले

thearyasamaj.org

नामक ग्राम में एक विचारवान् व्यक्ति, लाला भक्त रहता है वहाँ अन्य भी अनेक साधु-सन्त विराजते हैं। इस जिज्ञासा से कि सम्भव है वहां कोई मुक्ति का मार्ग जानने वाला मिल जाय, वे वहां पहुंचे। इस ग्राम में उन्हें एक ब्रह्मचारी मिले, जिन्होंने प्रेरणा की कि तुम नैष्ठिक ब्रह्मचारी बन जाओ। ब्रह्मचारी जी के कथन को श्री दयानन्द जी ने स्वीकार कर लिया। उसके पश्चात् ब्रह्मचारी जी ने उनको दीक्षा देकर काषायवस्त्र धारण कराए। एक तूम्बा हाथ में अवलम्बन कराया और आदेश किया कि आज से आप का नाम ''शुद्धचैतन्य'' हुआ। इसके अनन्तर ब्रह्मचारी श्री शुद्धचैतन्य जी उन्हीं साधु-सन्तों की मण्डली में मिल कर वहीं कुछ योग साधन में भी प्रवृत्त हो गये। एक रात का वर्णन है कि श्री शुद्धचैतन्य जी मठ से बाहर एक विशाल वृक्ष के नीचे बैठे हुए आराधना कर रहे थे। इतने में पेड़ पर पक्षियों की एक विलक्षण ''घू घू'' ध्वनि उस गहरी रात में गूँजने लगी। ब्रह्मचारीजी ने बाल्यावस्था में माँ बाप से भूत प्रेत के भ्रमयुक्त संस्कार ग्रहण किये थे, वे सहसा उद्भूत हो आये, और भूत-भय समझ कर वे मठ में प्रविष्ट हो गये।

नवीन काषायाम्बरधारी ब्रह्मचारी जी बहुत दिनों तक श्री लाला भक्त के मठ में योगाभ्यासादि साधन करते रहे, परन्तु यह देखकर कि उनकी वास्तविक कामना यहाँ पूर्ण न हो सकेगी, वे उस मठ से प्रस्थान करके कोट कांगड़ा नाम के एक छोटे से नगर में आ पधारे। यह स्थान अहमदाबाद के समीप, गुजरात प्रान्त के एक छोटे राज्य के अन्तर्गत है। उस गांव में बहुत से बैरागी वास करते थे। वहीं, एक राणी भी वैरागियों के फन्दे में फँसी हुई उनके पास रहती थी। श्री शुद्धचैतन्य जी को गेरुए वस्त्रों में देखकर वैरागियों ने उनकी हँसी उड़ाई, और वैरागी-जमात में मिल जाने की प्रेरणा की, इनकी रेशमी धोतियों पर वैरागियों ने आक्षेप किया। श्री ब्रह्मचारी जी के पास उस समय तीन रुपये शेष थे। उनसे उन्होंने नई सादी धोतियाँ लेकर, वे रेशमी धोतियाँ वहीं फेंक दीं और वैरागियों की अबोध जमात से वे पृथक् किसी अन्य स्थान में निवास करने लगे। उस स्थान में उन्होंने तीन मास बिताए।

कोट कांगड़ा में, उस समय सिद्धपुर में कार्तिक मास में होने वाले मेले की बड़ी चर्चा हो रही थी। मेले का होना सुनकर शुद्धचैतन्य जी इस भावना से कि सम्भव है, भाग्यवशात् वहाँ किसी योगीजन का मंगल मिलाप उपलब्ध हो जाय, सिद्धपुर की ओर चल पड़े। गांव से थोड़ी ही दूर जाने पाये थे कि उन्हें एक ग्रामीण वैरागी से साक्षात् हुआ। वह उनका परिचित था और उनके सारे कुल को भी अच्छी तरह से जानता था। गृह-त्याग के अनन्तर चिरकाल पश्चात् शुद्ध चैतन्य जी ने एक स्व-स्नेही व्यक्ति का अवलोकन किया, इसीलिए, उसे देखकर उनका हृदय उमड़ पड़ा और उनकी आँखों से टप टप आंसू गिरने लगे। उन्हें देखकर यही दशा वैरागी की हुई वैरागी ने ब्रह्मचारी जी के मुख से उनके गृहत्याग की सारी कहानी श्रवण की। उनके मार्ग की सम्पूर्ण घटनाओं को सुना। काषायवस्त्र धारण करने के कारण को भी जाना। प्रथम तो ब्रह्मचारीजी के वेष पर वैरागी जी को हँसी आ गई। परन्तु तुरन्त गम्भीर होकर उनके इस प्रकार घर से निकल भागने पर उसने अतीव खेद प्रकट किया और इस कार्य के लिए उन्हें धिक्कारा भी। अन्त में दुःखित होकर वैरागी जी ने पूछा-''क्या तुमने घर छोड़ दिया ? अब गृह पर न जाओगे ?'' शुद्धचैतन्यजी ने प्रथम-मिले स्नेही को स्पष्ट उत्तर दिया-''हाँ मैंने गृह-त्याग दिया है। कार्तिक के मेले पर सिद्धपुर जाऊँगा।'' वे इन्हीं बातों को करते करते, अन्त में एक दूसरे से पृथक हो गये; और श्री शुद्धचैतन्यजी ग्रामाँनुग्राम विचरते हुए कुछ कालान्तर में सिद्धपुर आ पहुंचे। वहाँ उन्होंने नीलकण्ठ महादेव के मन्दिर में आसन किया, इस मन्दिर में पहिले ही से कई दण्डी स्वामी और बहुत से ब्रह्मचारी विराज रहे थे। शुद्धचैतन्यजी, उन समीप-वासी सन्तों का सत्संग तो करते ही थे, परन्तु यदि, वे सुनते कि अमुक स्थान में कोई अभ्यासी आत्मज्ञानी महात्मा विराजते हैं, तो तुरन्त, वहीं पहुंच जाते। समादर से, नम्र भाव से, उनके आगे योग-विद्या की जिज्ञासा करते।

जहां सिद्धपुर के मेले में आये हुए सहस्त्रों जन इष्ट मित्रों से मिलते थे, इधर उधर मार्गों में भ्रमण करते फिरते थे, मेले की शोभा को निहार रहे थे, क्रय-विक्रय में लगे हुए थे, हास्य-विलास में लीन थे, आमोद-प्रमोद में मग्न थे, खान पान और शयन में सुख मानते थे, वहां वैराग्य के रंग में रंगे हुए, सच्ची लगन से प्रेरित, धुन के धनी ब्रह्मचारी श्री शुद्धचैतन्य जी एक एक कुटिया पर चक्कर लगा रहे थे, एक एक महात्मा के आसन पर जाकर सिर झुकाते थे, इसलिए कि किसी से भव-भय-भंजिनी भगवती योग-विद्या प्राप्त हो और अमर जीवन का मार्ग मिले।

उधर, उस वैरागी ने जो उन्हें कोट कांगड़ा गाँव से निकलते ही मिला था, स्वस्थान पर जाकर पत्र द्वारा उनके पिता को सूचित कर दिया कि तुम्हारे पुत्र ने गृह त्याग कर काषायम्बर धारण कर लिए हैं और अब वह सिद्धपुर के मेले पर गया है। यह समाचार पाते ही, उनके पिता चार सैनिकों समेत सिद्धपुर आ पहुंचे और मेले में घूम-घूम कर अपने पुत्र को ढूँढने लगे। एक दिन, प्रातःकाल, उनके पिता एकाएक उस शिवालय में आ खड़े हुए जिसमें कि उनका पुत्र गेरुए वस्त्र धारण किये सामने बैठा था। पुत्र को इस दशा में देख कर उनके कोप का पार न रहा। उनकी आंखें रक्तवर्ण हो गईं। वे कड़कती हुई वाणी से बोले ''तूने सदैव के लिये हमारे वंश को दूषित कर दिया। तू हमारे कुल को कलंक लगाने वाला जन्मा है'' आवेश में उन्होंने और भी बहुत कुछ ऊंचा नीचा कहा। ब्रह्मचारीजी कोप से भीत होकर अपने पिता की ओर नेत्र भरकर देखने का भी साहस न कर सकते थे। उन्हें उस समय पिता की ताड़ना से त्राण प्राप्त करने का एक ही उपाय सूझा और वह यह कि उन्होंने आसन से उठकर पिता के दोनों चरण पकड़ लिए, साथ ही प्रार्थना की कि गृह-त्याग, मैंने धूर्त्त लोगों के बहकावे से किया है। मैं अपने इस कर्म का पर्याप्त फल पा चुका हूं। मैंने दुःख उठाए हैं। आप शान्त हूजिये। मेरे अपराधों को क्षमा कीजिए। मैं तो यहां से घर ही आने को था परन्तु यह भी अच्छा हुआ जो आप आ गये हैं। जब आज्ञा करें, मैं प्रसन्नता पूर्वक आपके साथ चलने को उद्यत हूं।

परन्तु पिता की प्रचण्ड कोपाग्नि ऐसी न थी कि शीघ्र ही शान्त हो जाती। उन्होंने झपट कर ब्रह्मचारीजी के गेरुए कुरते को हाथ से पकड़ा और बल पूर्वक खींच कर उसकी धज्जियां उड़ा दीं, साथ साथ शतशः दुर्वचन-दृष्टि भी करते गये। श्वेत वस्त्र पहनाकर वे उन्हें अपने ठहरने के स्थान पर ले गये, वहां से ले जाकर भी बहुत कटु वचन कहे और यह कहा कि तेरी माता तेरे वियोग के कारण रो

thearyasamaj.org

रो कर मर रही है और तू ऐसा कठोर हृदय है कि मातृ-हत्या करना चाहता है। पुत्र ने अति अनुनय विनय से कहा कि अब निश्चिन्त हो जाइए। मैं आप के संग चलकर माताजी के दर्शन करूंगा। पर पिता निश्चिन्त नहीं हुए। उन्होंने पुत्र पर कड़ा पहरा लगा दिया। सैनिकों को आज्ञा दी कि इस निर्मोही को अकेले कहीं आने जाने न दो, सदा इसके संग रहो। रात भर जागते हुए इसे अपनी दृष्टि में रखो। इस प्रकार श्री शुद्धचैतन्यजी अपने पूज्य पिता के आदेश से दृष्टिबन्ध तो हो गये, परन्तु गृह-त्याग और अमर जीवन की प्राप्ति की धुन में वे उतने ही पक्के थे, जितने अपने प्रयत्न में उनके पिता।

ब्रह्मचारीजी को उस समय अपनी उद्देश्य-सिद्धि का जो भी मार्ग सूझा, वे उस पर चलने से, केवल यही नहीं कि हिचकिचाए ही न हों किन्तु उसका पूरा पूरा उपयोग भी किया। इधर पिताजी को भरसक यत्न से विश्वास दिलाते रहे कि मैं अवश्यमेव गृह पर चलूंगा और उधर यह सोचते-विचारते रहे कि जिस समय अवसर अनुकूल आये, जब दांव लगे, यहाँ से भाग निकलें। पितृबन्धन में पड़े दो दिन और दो रातें बीत गईं। तीसरा दिन भी ज्यों त्यों करके काटा। तीसरी रात आ गई। उसके एक एक पल को शुद्धचैतन्य जी आंखों में काट रहे थे। वे बिछौने पर लेटे हुए अवश्य थे-देखने वालों को भी सोये हुए दिखाई देते थे, परन्तु तीव्र मानस लगन से संचालित, भीतर से जागते थे। तीसरी रात्रि का भी आधा भाग बीत गया, और तीसरा पहर आरम्भ हुआ। निद्रा से अभिभूत पहरे वाला ऊँघते ऊँघते दैवयोग से गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गया। ब्रह्मचारी जी अनुकूल काल हाथ लगा समझ वहां से शीघ्रता से चल निकलने को बद्धपरिकर हो गये। चलते समय हाथ में जलपूर्ण कलश ले लिया कि यदि किसी ने पूछा तो "लघुशंका करने जा रहा हूं,' कह दिया जायेगा। बिना रोक-टोक, भागते हुए सिद्धपुर से आध कोस दूर वे एक उद्यान में जा पहुंचे। उस उद्यान में एक पुराना मन्दिर था। वट वृक्ष की जटाओं के सहारे वे उस मन्दिर के शिखर पर हाथ में कलश लिये जा बैठे। बैठे बैठे मन ही मन सोचने लगे कि देखें दैव अब क्या क्या दृश्य दिखाता है।

दूसरी ओर जब पहरे वालों और ब्रह्मचारीजी के पिता को पता लगा कि वे भाग गये हैं तो वहां हलचल मच गई। उन्हें पकड़ने के लिये चारों ओर मनुष्य दौड़ पड़े। ढूंढते-ढूंढते ये लोग उस उद्यान में भी पहुंचे जहां ब्रह्मचारीजी छिपे बैठे थे। मन्दिर के भीतर बाहर ढूंढा, मालियों से भी पूछताछ की, परन्तु कोई पता न चला। अन्त को निराश होकर वे लोग उद्यान की ओर से चले आये। यह दृश्य रात्रि के चार बजे तक ब्रह्मचारीजी के सामने होता रहा, परन्तु वे ऐसे दब के बैठे थे कि हिलना जुलना, खाँसना खंखारना तो दूर रहा, श्वास-प्रश्वास की गति भी वश में किये हुए थे। सारा दिन इस घोर कष्ट में और उपवास में उन्होंने वहीं बैठे बैठे बिताया। जब रात के सात बजे तो उस समय कुछ अंधेरा हो गया था। ब्रह्मचारीजी मन्दिर की चोटी से नीचे उतर आये और सड़क छोड़कर आगे चल पड़े। किसी से गाँव आदि का भी नाम पूछ लिया। उस उद्यान से दो कोस के अन्तर पर जाकर उन्होंने एक ग्राम में निवास किया। प्रातः काल होने पर उस गांव से भी प्रस्थान कर गये। ब्रह्मचारीजी का बन्धु मिलाप-पितृदर्शन-सिद्धपुर में अन्तिम ही समझना चाहिये।

ग्राम ग्राम और नगर-नगर विचरते हुए वे अहमदाबाद से बड़ौदा नगर में आकर कुछ काल ठहर गए। यहां चैतन्य मठ में कुछ ब्रह्मचारी और संन्यासी रहते थे। उनसे शुद्धचैतन्यजी का वेदान्त विषय पर बहुत वार्तालाप हुआ करता था। वहां रहने वालों में ब्रह्मानन्दजी आदि ब्रह्मचारी और संन्यासी लोग वेदान्त में बहुत घुटे हुए थे। उन्होंने अपनी कोटियों और पंक्तियों को सुना सुना कर शुद्धचैतन्य जी को पक्का वेदान्ती बना दिया। यद्यपि, पहले वेदान्त शास्त्र के अध्ययन काल में, उनका विचार उस ओर कुछ झुक गया था; परन्तु मठ में तो उन पर ऐसा रोग चढ़ा कि वे परमात्मा से भिन्न सबको मिथ्या मानने लगे और उन्होंने अपने आपको ब्रह्म कहना आरम्भ कर दिया।

श्री शुद्धचैतन्य जी ने यद्यपि 'अहं ब्रह्मास्मि' इस वाक्य को अपने ऊपर घटा लिया था, परन्तु इससे उनके उन्नतिशील अंतःकरण में जो जिज्ञासा की ज्योति जाग रही थी वह वेदान्त की फीकी फक्किकाओं से शान्त नहीं हुई। इसलिये वाराणसी की रहने वाली एक बाई के मुख से ज्योंही उन्होने सुना कि नर्मदा तट पर बड़े-बड़े विद्वानों की एक बड़ी सभा होने वाली है वे तुरन्त बड़ौदा से नर्मदा की ओर चल पड़े। वहाँ पहुंचकर वे एक सच्चिदानन्द नाम के परमहंस से मिले और उनसे अनेक प्रकार की ज्ञान चर्चा करते रहे। सच्चिदानन्द जी ने उन्हें बताया कि इसी नर्मदा के तट पर, चाणोदकर्नाली में बड़े-बड़े विद्वान् ब्रह्मचारियों और संन्यासियों की एक मण्डली आज कल ठहरी हुई है। उस मण्डली के महात्माओं से मिलकर आपको विशेष लाभ होगा। जैसे कर्मयोग के आदर्श स्वरूप श्रीराम दण्ड-कारण्य में विचरते हुए, जहाँ कहीं दूर समीप, ऋषि मुनियों का आश्रम सुन पाते, सत्संग जिज्ञासा से वहाँ पहुंच जाते थे, उसी प्रकार अमर जीवन की जड़ी को जानने के आदर्शभूत जिज्ञासु श्री शुद्धचैतन्य जी चाणोदकर्नाली में जा विराजे। उन्होंने वहाँ श्री चिदाश्रम आदि सच्चे विद्वान् संन्यासियों की भेंट प्राप्त की। कई सुयोग्य पण्डित ब्रह्मचारियों का भी मिलाप उपलब्ध किया, और वे अनेक शास्त्रीय, पारमार्थिक विषयों पर वार्तालाप करके ज्ञानगोष्ठी का सुख अनुभव करते रहे। वहीं एक परमानन्द नाम के परम-हंस विराजते थे। श्री शुद्धचैतन्यजी ने उनके पास अध्ययन करना आरम्भ कर दिया। कई मास के अध्ययन से उन्होंने वेदान्तसार, आर्य हरिमीडे तोटक, आर्य हरिहर तोटक और वेदान्त-परिभाषा प्रमुख ग्रन्थ पढ़ लिये।

चौथा सर्ग

अपनी ब्रह्मचर्य-दीक्षा की पद्धति के अनुसार शुद्धचैतन्य जी अपने हाथ का पका ही खाते थे। इस कारण उनके विद्याध्ययन में बाधा पड़ती थी। सम्पूर्ण सांसारिक वासनाओं से वे पहले ही विमुक्त हो चुके थे, परन्तु फिर भी आश्रम-शैली से यथाविधि संन्यास लेने में उन्होंने दो लाभ देखे-एक तो भोजन बनाने के बखेड़े से बच जायेंगे और दूसरे चतुर्थाश्रम में प्रवेश करने से नाम और आकृति आदि में परिवर्तन हो जाने पर कोई उन्हें पहचान भी न सकेगा। इस प्रकार पिता आदि द्वारा पकड़े जाने का भय भी जाता रहेगा। इस प्रकार सोचकर वे संन्यासग्रहण करने के लिये सर्व प्रकार सन्नद्ध हो गये। उन्होंने अपने एक मित्र दक्षिणी पण्डित द्वारा स्वामी श्री चिदाश्रम जी को कहलाया कि आप शुद्धचैतन्य ब्रह्मचारी जी को संन्यास-दीक्षा देना स्वीकार कीजिए। परन्तु उस परमदीक्षित संन्यासीप्रवर ने

thearyasamaj.org

यह कह कर कि ब्रह्मचारी अभी युवक है, अपनी अस्वीकृति प्रकाशित कर दी।

श्री चिदाश्रमजी के संन्यास न देने से शुद्धचैतन्य जी का उत्साह भंग न हुआ। वे विद्याध्ययन में, योग-साधना में, स्वसमय यापन करते और किसी अन्य महाभाग संन्यासी का प्रतीक्षण करते कि जिससे संन्यास ग्रहण कर सर्वथा निर्द्वन्द्व हो जाएं। सन्तों के सत्संग में, मुनियों के विमल मिलाप में, विद्याविनोद में शास्त्र चर्चा में, आत्मिक आराधन, चिन्तन और ध्यान में शुद्धचैतन्य जी ने नर्मदा तट पर डेढ़ वर्ष व्यतीत किया। इस समय उनकी आयु २४ वर्ष २ मास की हो गई थी।

एक दिन श्री शुद्धचैतन्य जी ने किसी से सुना कि चाणोद से डेढ़ कोस के अन्तर पर जंगल में एक दाक्षिणात्य दण्डी स्वामी आकर विराजे हैं। वे बड़े विद्वान् उत्तम संन्यासी हैं। उनके साथ एक ब्रह्मचारी भी है। तब शुद्धचैतन्यजी अपने उपर्युक्त मित्र दक्षिणी पण्डित को साथ लेकर प्रशंसित दण्डीजी की सेवा में उपस्थित हुए और सादर नमस्कार करने के पश्चात् पास बैठकर उन्होंने वार्तालाप करना आरम्भ कर दिया। ब्रह्मविद्या सम्बन्धी अनेक विषयों पर बातचीत होती रही। अन्त में श्री चैतन्य जी को निश्चय हो गया कि दण्डी जी महाराज और संगी ब्रह्मचारी दोनों ब्रह्मविद्या में निपुण हैं। दण्डी जी का शुभ नाम पूर्णानन्द सरस्वती था। शुद्धचैतन्य जी के हृदय में उनसे संन्यास ग्रहण करने की उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई। तब उन्होंने अपने मित्र पण्डित जी को संकेत किया कि दण्डी जी के सम्मुख उनके संन्यास का प्रस्ताव करें। पण्डित जी ने निवेदन करते हुए कहा-"दण्डी जी महाराज ! यह विद्यार्थी, ब्रह्मचारी शुद्धचैतन्य, अति सुशील और विनीत है। ब्रह्मविद्या पढ़ने के लिए अतीव उत्कण्ठित है। परन्तु क्या करे भोजन बनाने के बखेड़े ही में इसका बहुत सा समय व्यर्थ व्यय हो जाता है, जिससे यथारुचि विद्याध्ययन नहीं कर सकता। इसकी कामना के अनुसार, आप कृपा करके इसे चतुर्थ प्रकार का संन्यास दे दीजिये।"

यह प्रार्थना सुनकर, उक्त स्वामी जी ने, शुद्धचैतन्य जी की भरपूर युवावस्था के कारण उन्हें संन्यास देने से एक बार तो मन हटा लिया। पर पण्डित जी के अधिक आग्रह से संन्यास की अनुमति देते हुए यह कहा कि यदि ये पूर्ण वैराग्यवान् हैं तो किसी गुजराती संन्यासी से दीक्षा लें। हम तो महाराष्ट्री हैं। पण्डितजी बोले-"महाराज दक्षिणी संन्यासी, गौड़ों को जो पंच द्राविड़ों से बाहर हैं, संन्यास दे देते हैं तो आप इसे संन्यास क्यों नहीं देते ? यह गुर्जर ब्राह्मण हैं। और यह तो आप जानते ही हैं कि गुर्जर पंच द्राविड़ों में गिने जाते हैं।" पण्डित जी की अन्तिम युक्ति से दण्डी जी ने संन्यास देना स्वीकार कर लिया और अति प्रसन्नता प्रकाशित करते हुए श्री शुद्धचैतन्य मुमुक्षु को व्रत उपवास और जपादि क्रियानुष्ठान करने का आदेश किया।

दो दिन तक जपादि साधनों को यथा विधि करके तीसरे दिन ब्रह्मचारी जी दण्डी जी की सेवा में उपस्थित हुए। उनसे उसी दिन श्राद्ध कराके, दण्डी स्वामी जी ने विधिपूर्वक संन्यास धारण कराया। हाथ में दण्ड अवलम्बन कराकर उनका नाम 'दयानन्द सरस्वती' उद्घोषित किया। विनय से नम्रशिर, नव शिष्य को स्वामी पूर्णानन्दजी ने यतियों के धर्म बताए, संन्यास की रीति-नीति का उपदेश दिया। आश्रम-मर्यादा और विद्योपार्जन, जप तप आदि के करने की शिक्षा की। वे कई दिन तक गुरु चरणों में बैठकर बड़ी विनीतता से ब्रह्मविद्या के ग्रन्थ पढ़ते रहे। अब, उन्होंने गुरु-आदेश के अनुसार विद्याराधना में विघ्नकारी जानकर दण्ड को विसर्जन कर दिया। स्वामी पूर्णानन्द श्रृंगेरी मठ से द्वारिका को जाते हुए मार्ग में कुछ दिनों के लिये 'चाणोद' में ठहर गये थे। कुछ दिन के पश्चात्, जब वहाँ से चलने लगे तो उनके नूतन शिष्य दयानन्द ने बड़ी पूजा और सम्मान से गुरुचरणों में प्रणाम किया। स्वामी जी महाराज बड़े वात्सल्य भाव को प्रदर्शित करते हुए उनसे विदा होकर द्वारिका दर्शन को चल पडे। स्वामी दयानन्द सरस्वती पीछे कई दिनों तक चाणोद ही में टिके रहे।

एक दिन उन्होंने सुना कि व्यासाश्रम में योगानन्द जी एक महात्मा विराजमान हैं और वे योग की क्रियाओं में कुशल हैं। उस महात्मा के मिलाप की उत्सुकता से प्रेरित होकर वे व्यासाश्रम में जा पहुंचे। वहाँ उन्होंने उक्त महात्मा से योग विद्या के रहस्य सुने और इसकी पुस्तकें भी अच्छी तरह पढ़ीं। योग की क्रियाओं को सीख लेने के अनन्तर उन्होंने सुना कि छिन्नाड़े में एक कृष्ण शास्त्री नाम का एक धुरन्धर वैयाकरण पण्डित रहता है। वे व्याकरण के अध्ययन की लालसा से उस ग्राम में जा विराजमान हुए। कुछ काल तक कृष्ण शास्त्रीजी से व्याकरण के ग्रन्थ पढ़कर फिर चाणोद कर्नाली में पधारे और वहाँ एक राजगुरु से वेदाध्ययन करने लगे।

स्वामी दयानन्दजी को सत्य के जानने की इच्छा, योग विद्या की प्राप्ति की परम लगन, साधु-सन्तों के शुभ दर्शनों और शान्तिदायक सत्संगों के लिये सदा उत्साहित करती रहती थी। नई नई विद्यायें सीखने के लिये वे सदा उत्सुक रहते थे। किसी महात्मा के समीप जाने में उन्हें कभी संकोच न होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने गृहपरित्याग करते ही सबसे पहले अहंकार के काँटे को हृदय की भूमि से उखाड़ फेंका था, मान को मर्दन कर दिया था, संकीर्णता सर्वथा छोड़ दी थी और तब आत्मप्रेम-प्रसादी मांगने के निमित्त लगन की झोली हाथ में लिये श्रद्धापूर्वक कुटी कुटी और द्वार-द्वार चक्कर लगाने लगे थे। यह हो नहीं सकता कि ऐसे श्रद्धालु जिज्ञासुओं की कामनायें पूर्ण न हों सच है 'जिन ढूंढा तिन पाया।'

चाणोदकर्नाली में स्वामी दयानन्दजी ने दो महात्माओं के दर्शन प्राप्त किये। उनमें से एक का नाम ज्वालानन्दपुरी और दूसरे का नाम शिवानन्दगिरी था। ये दोनों महानुभाव प्रसन्नचित्त, प्रशान्तात्मा, योगी थे। स्वामी दयानन्द जी अपने अहोभाग्य मानकर लगे उनके मंगल मिलाप का लाहा लूटने। योगी महात्माओं ने भी जान लिया कि यह जिज्ञासु आत्मपिपासु है। इसलिये उसे अपने साथ मिलाकर अभ्यास आरम्भ कराया। अभ्यासानन्तर तीनों मिलकर योग शास्त्र की चर्चा किया करते थे। कुछ काल के उपरान्त वे दोनों योगी अहमदाबाद चले गये और दयानन्द जी को आदेश कर गये कि एक मास के पश्चात् आप हमारे पास अहमदाबाद में आइयेगा उस समय हम आपको योगसाधन के सम्पूर्ण गूढ़तत्व क्रियाओं सहित भली भांति समझा देंगे। वहां हमारा आसन नदी के किनारे दूधेश्वर महादेव के मन्दिर में होगा।

स्वामी दयानन्द जी चाणोद में रहकर एक मास तक जप तप क्रियानुष्ठान करते रहे। फिर महात्माओं की आज्ञानुसार अहमदाबाद

thearyasamaj.org

चले गये। सीधे दूधेश्वर के मन्दिर में जाकर उनके दर्शनों से कृतार्थ हुए। वहां उन सन्त शिरोमणियों की शुभ संगति में रातदिन रहकर, आत्म-तृष्णा की परितृप्ति में परायण रहते थे। प्रतिदिन के सहवास से योगिराजों ने समझ लिया कि स्वामी दयानन्दजी, एक उत्तम कोटि के सुपात्र हैं। इन्हें योग तत्वों के अमूल्य रत्नों से आकण्ठ भर देना चाहिये। उन्होंने योग का प्रत्येक भेद और रहस्य स्वामी दयानन्दजी को बताया। उन योगियों की शुभ कामना से श्री स्वामी जी को जो लाभ हुए उनका उन्होंने अपनी कृतज्ञता के साथ इस प्रकार वर्णन किया है-''वहां उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की और अपने कथनानुसार मुझे निहाल कर दिया। उन्हीं महात्माओं के प्रभाव से, मुझे क्रिया समेत पूर्ण योग विद्या भली भांति विदित हो गई इसलिए मैं उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूं। वास्तव में उन्होंने मुझ पर एक महान् उपकार किया। इस कारण मैं उनका विशेष रूप से अनुगृहीत हूं।''

चिरकाल तक योगिजनों के सत्संग से कृतकृत्य होकर श्री स्वामीजी ने आबू पर्वत की यात्रा के लिये प्रस्थान किया। उन्होंने सुना था कि आबू पर बहुत योगी जन रहते हैं इस कारण, इस पर्वत पर आकर महात्माओं के मिलापार्थ यत्न करने लगे। वहाँ अर्बुदा भवानी नाम के पर्वत शिखर पर तथा अन्य अनेक स्थानों में उनकी सन्त महात्माओं से भेंट हुई। यहाँ के कई योगी, पूर्वोक्त दो योगियों से विशेष रूप से आगे बढ़े हुए थे। उनसे भी स्वामी जी ने विशेष योग तत्वों की प्राप्ति की।

इस प्रकार भिन्न-भिन्न स्थानों का पर्यटन करते हुए स्वामीजी महाराज महात्माओं के मिलाप से, विद्वानों के सम्पर्क से, अभ्यासियों के मेल-जोल से, और योगी सन्तों के शुभ संग से आत्मिक उन्नति करते रहे, शान्ति के साधनों का संचय करते रहे। वे विद्यार्थी बन कर सबके पास गये और जिससे जो भी कुछ शुभ प्राप्त हुआ उसे कृतज्ञता से धारण करते रहे।

इस प्रकार यतियों मुनियों को मिलते हुए स्वामीजी महाराज वैशाख सम्वत् १९१२ में होने वाले कुम्भ के महामेले पर हरिद्वार पधारे। उस समय उनकी आयु ३२ वर्ष की थी। उनके यहाँ आने का प्रयोजन यह था कि कुम्भ पर, बहुत से योगी जन गुप्त रूप से आकर रहते हैं, जिनको साधारण जन नहीं जान सकते। उनसे मिलकर ज्ञान-चर्चा करेंगे। गंवार के लिए कंकड़ और हीरा समान है। परन्तु उनमें कौन महत्ववान् है, यह बात जौहरी तुरन्त जान जाता है, स्वामी दयानन्द, इसी प्रकार महान् साधु समारोह में अपनी परख के प्रभाव से उत्तमोत्तम सन्तों को मिलते थे। हर की पैड़ियों की ओर बड़ी भारी भीड़ और महा कोलाहल था। मनुष्य पर मनुष्य गिरता था, कन्धे से कन्धा छिलता था। संकीर्ण भूमि, जन संघट से समाकुल थी। सर्वत्र अगणित मक्खियां भिनभिना रही थीं। जहां देखो जूठी पत्तलें, उच्छिष्ट-सहित पत्ते पड़े थे। तट-समीप वाहिनी गंगा धारा भी लाखों नरनारियों के नहाने से, वस्त्रों के धोने से, बर्तनों के प्रक्षालन से, नागों के देह की राख से शुद्ध तो कहाँ ? निर्मल भी न रही थी। धूल से भूतलाकाश एक हो रहा था। गंगा का किन्नारा, ध्यान समाधि तो कहाँ, सुख से विश्राम लेने के भी अयोग्य हो गया था। इसी कारण महात्मा दयानन्दजी महाराज, जो योग-साधन परायण थे मेले के दिनों में गंगा के उस पार चण्डी पर्वत के जंगल में निवास करते रहे। ऐसे मेलों पर आये अन्य योगी जन भी प्राय: नदी के उसी पार रहा करते हैं।

मेले के पश्चात् स्वामीजी महाराज ने हृषीकेश की यात्रा की। वहां उच्चतर महात्मा संन्यासियों के समीप रह कर योग साधन की रीतियां सीखीं, विमल चित्त और विशुद्ध आत्माओं का सत्संग लाभ लिया। उष्णता के विशेष बढ़ जाने से सन्त लोग गंगा के उपरिभागों में चले जाते हैं, परन्तु स्वामी दयानन्दजी बहुत दिनों तक हृषिकेश में ही अकेले विराजते रहे।

एक दिन यहाँ उन्हें एक ब्रह्मचारी और दो पहाड़ी साधु मिले। परस्पर अधिक परिचय हो जाने से स्वामीजी उनके साथ टिहरी की यात्रा में प्रवृत्त हुए. टिहरी नगर के बाहर उन्होंने किसी स्वच्छ स्थान में आसन किया। यह नगर उस समय विद्यावृद्ध साधु सज्जनों के निवास और बहुत से सुपठित राज पण्डित के कारण प्रसिद्ध था। एक दिन का वर्णन है कि एक राजपण्डित ने स्वामीजी के आसन पर आकर उन्हें गृह पर भोजन पाने के लिये सादर निमन्त्रित किया। नियत समय पर उनको लिवा लाने के लिये एक पुरुष भी आया, स्वामी दयानन्दजी और उनका साथी ब्रह्मचारी दोनों निमन्त्रणदाता गृहस्थ के गृह पर गए। गृहद्वार से आगे बढ़ते ही स्वामीजी को अत्यन्त घृणा आई, क्योंकि उन्होंने देखा कि एक पण्डित मांस काट काटकर पका रहा है। कुछ अधिक आगे जाने पर उन्होंने देखा कि मांस और अस्थियों के ढेर और पशुओं के भुने हुए सिरों पर कई पण्डित छुरी आदि से कार्य कर रहे हैं ! इस सारे तान्त्रिक दृश्य को देख स्वामीजी घृणा से व्याकुल और आश्चर्य चकित हो गये, इतने में उन्हें आते देख गृहपति सम्मान पूर्वक स्वागत के लिये सन्मुख आया। उसने आदर से कहा ''कृपया बिना संकोच भीतर चले आइये।'' परन्तु स्वामीजी को तो घृणा के कारण वहां एक क्षण ठहरना भी भारी प्रतीत हो रहा था। इस लिये यह कह कर ''आप अपना काम करते जाइये, मेरे लिए कुछ कष्ट न कीजिए'' वे झट वहां से लौट पड़े और अपने स्थान पर आकर विश्राम लिया। थोड़े समय के अनन्तर वह गृहपति स्वामी जी के पास फिर आया और उनके लौट आने पर दुःख प्रदर्शित करता हुआ बोला-''कृपया चलिए गृह पर भोजन पाइये। न जाने आप क्यों पीछे लौट आये हैं। हमने तो आपके निमित्त मांसादि उत्तमोत्तम भोजन प्रस्तुत किये हैं।'' स्वामीजी ने स्पष्ट कह दिया ''यह सब वृथा और निष्फल है क्योंकि आप मांस-भक्षी हैं। मांस का खाना तो दूर रहा मैं तो उसके देखने से रोगी हो जाता हूं। मेरे योग्य तो केवल फलादि हैं। यदि आप मेरा न्योता करना चाहते हैं तो कुछ अन्न और फल आदि वस्तु भिजवा दीजिये। मेरा ब्रह्मचारी यहीं पर भोजन बना लेगा।'' यह सुनकर वह पण्डित अपने किये पर लज्जित हुआ, और घर पर जाकर उसने अन्न फलादि स्वामी निर्दिष्ट पदार्थ उनके स्थान पर पहुंचा दिये।

स्वामीजी महाराज कई दिनों तक टिहरी में रहे। वह निमन्त्रणदाता पण्डित उनके पास आने जाने लग गया। स्वामीजी ने उससे प्रसिद्ध परन्तु दुष्प्राप्य पुस्तकों का पता आदि पूछा। उसने बताया कि यहां बड़े-बड़े कवियों के रचे हुए संस्कृत, व्याकरण, कोष और तन्त्र-ग्रन्थ मिल सकते हैं। श्रीस्वामीजी ने उन दिनों तक तन्त्र ग्रन्थों का अवलोकन नहीं किया था, इस कारण पण्डितजी को तन्त्र ग्रन्थ ले आने के लिये कहा। वह स्वल्प समय में कुछ एक तन्त्र पुस्तकें

thearyasamaj.org

स्वामीजी को दे गया। स्वामीजी उनमें से एक पुस्तक को उठाकर **ज्यों ही खोलकर पढ़ने लगे तो अकस्मात् उनकी दृष्टि एक ऐसे** लेख पर पड़ी, जिसमें अत्यन्त लज्जाजनक, अशुद्ध और ऊटपटांग बातें लिखी हुई थीं। उस लेख को पढ़ कर वे कांप उठे। उन्होंने उस पुस्तक में यह लिखा देखा कि माता, भगिनी, कन्या, चूहड़ी चमारी से अनुचित सम्बन्ध धर्म हैं। मद्य, तथा मत्स्य आदि अनेक जन्तुओं के मांस का सेवन, और ब्राह्मण से लेकर चण्डाल पर्यन्त सबका एक स्थान में भोजन करना तन्त्र धर्म में विहित है ! यह भी लिखा देखा कि मद्य, मांस, मछली, मुद्रा और मैथुन इन पांच मकारों के सेवन से मोक्ष प्राप्त होता है। इस प्रकार के लेख तन्त्र ग्रन्थों में पढ़कर स्वामीजी को पूर्ण निश्चय हो गया कि उनके रचयिता कवि धूर्त, स्वार्थी और दुष्ट थे।

टिहरी से प्रस्थान कर स्वामी जी ने श्रीनगर में पधार केदार घाट पर एक मन्दिर में आसन लगाया। श्रीनगर के पण्डितों से उनकी जब कभी बातचीत होती तो स्वामी जी, टिहरी में पढ़े हुए तन्त्र ग्रन्थों के प्रमाणों से उन्हें ऐसा लज्जित करते कि वे अपनी हार स्वीकार कर लेते। श्रीनगर के समीप, एक वनावृत्त पहाड़ी पर गंगागिरि नाम के एक अच्छे विद्वान् महात्मा, निवास करते थे। वे महात्मा दिन के समय कभी उस पहाड़ी से नीचे नहीं उतरते थे। स्वामी दयानन्द जी का उस एकान्तवासी शान्तात्मा के साथ मिलाप हो गया, प्रति दिन के वार्तालाप से दोनों परस्पर मित्र हो गये। वे नित्य प्रति मिलकर योगादि उत्तम उत्तम विषयों की चर्चा में समय बिताते। नित्य के समागम और तर्क-वितर्क से स्वामी जी को यह निश्चय हो गया कि हम और गंगागिरि जी आपस में मिलकर रहने के सर्वथा योग्य हैं। स्वामी जी को तो उस एकान्तवासी महात्मा की संगति ऐसी अच्छी लगी कि वे दो मास से अधिक काल तक उनके साथ रहे।

ग्रीष्म-ऋतु के आरम्भ में गंगागिरिजी से विदा होकर श्री स्वामी जी अपने एक ब्रह्मचारी और दो पहाड़ी साधुओं सहित, केदारघाट से चलकर रुद्रप्रयाग आदि स्थानों में घूमते हुए अगस्त्य मुनि की समाधि पर पहुंचे। इस स्थान से उत्तर की ओर आगे एक पर्वत-शिखर 'शिवपुरी' नाम से प्रख्यात है। स्वामी जी उस पर गये। वहाँ उन्होंने शरद् ऋतु के चार मास व्यतीत किये। शिवपुरी से पीछे लौटते समय स्वामी जी ने साथियों के संग को भी एक प्रकार का खटका ही समझा। इसलिए उनसे पृथक् होकर, एकाकी फिर केदारघाट में आ गए। वहां से जाकर कुछ समय, गुप्तकाशी में रहे। गुप्तकाशी से गौरीकुण्ड, भीमगुफा, त्रियुगी नारायण होते हुए थोड़े ही दिनों में तीसरी बार फिर केदारघाट में सुशोभित हुए। केदारघाट का वास उन्हें अति प्रिय था और वहाँ गंगागिरिजी का सत्संग-सुख भी मनोभावना था। इसलिए इस बार, वे वहाँ चिरकाल तक उस स्थान में रहे, जहाँ जंगम जाति के कुछ एक पुजारी ब्राह्मण निवास करते थे। इसी बीच में स्वामी जी के साथी दोनों पर्वतीय साधु और एक ब्रह्मचारी भी उन्हें आ मिले। यहाँ स्वामी जी केदारघाटवासी ब्राह्मणों और पण्डितों की करतूतों को भी देखते रहे। उन लोगों की जो बात स्मरण रखने योग्य थी उन्हें वे ध्यानागत कर लेते। जब वहाँ रहते हुए स्वामी जी ने वहां वालों की रीति और प्रकृति को भली भाँति समझ लिया तब उनके मन में निकटवर्ती हिममण्डित हिमालय की पर्वतमालाओं में भ्रमण करने की उमंग पैदा हुई। उन्होंने चलते समय सुदृढ़ निश्चय कर लिया कि चाहे जो हो, जिन सन्तों-सिद्धों को इतनी कथायें-वार्तायें **सुनते आये हैं उनका पता आवश्यक लगाना चाहिये। वे महात्मा इन** शिखरों और गिरि-गुहाओं में हैं भी या नहीं ? इसका निश्चय करना चाहिये। दुर्गम, विषम पर्वतों की यात्रा की कठिनाइयाँ स्मरण कर, शरदृऋतु के दिनों दिन बढ़ते हुए अतिशीत को सोचकर स्वामी जी ने पहले पर्वतवासियों से महात्माओं के सम्बन्ध में पूछना ताछना आरम्भ कर दिया। इस सारे प्रयत्न से उन्हें पता लगा कि पर्वतवासी भोले भाले लोग, एक तो भ्रममूलक गप्पें हाँकते हैं और दूसरे महात्माओं के विषय में अनभिज्ञ हैं। स्वामी जी के साथी शीत से पीड़ित होकर दो दिन पहले ही उनसे पृथक् हो गये थे, इसलिए वे अकेले ही हिमाच्छादन से श्वेत, आकाश-स्पर्शी, अति उतुंग और अतिशीलता शैल-शिखरों के ऊपर नीचे, इधर उधर बीस दिन तक घूमकर पीछे लौट आये, परन्तु उन्हें किसी महात्मा का साक्षात् न हुआ।

इसके पश्चात् स्वामीजी ने तुंगनाथ की चोटी पर चढ़ना आरम्भ किया। वहां पहुंचकर उस स्थान के मन्दिर को उन्होंने मूर्तियों और पुजारियों से परिपूर्ण पाया, पुजारियों के ऐसे जमघटे को देख वे उस दिन उतर आये। परन्तु कुछ आगे चलकर उन्हें दो मार्ग दीख पड़े। उनमें से एक मार्ग पश्चिम को जाता था और दूसरा नैऋत्य को। इनमें से स्वामीजी उस ओर झुके, जो एक बड़े विकट वन को जाता था, थोड़ी दूर जाने पर ही वे ऐसे सघन अरण्य में जा निकले जो बड़ी बड़ी शिलाओं और छोटे मोटे अगणित पत्थरों से आकीर्ण था। वहां के नाले जलहीन और भयावने हो रहे थे। इस पर विपत्ति यह कि आगे चलने के लिए मार्ग का कोई चिन्ह तक न दिखाई पड़ता था। इस प्रकार वृक्ष समूह से घनीभूत, लता-पताओं से आवृत विषम वन में स्वामीजी महाराज घिर गये। नभभेदी घने वृक्षों के घोर आवरण ने सूर्य के प्रकाश को रोका हुआ था। इसलिए दिन के समय ही उन्हें रात सी प्रतीत होने लगी। ऐसी दशा में स्वामीजी ने सोचा कि अब ऊपर को लौटें या नीचे को ही चलते चलें। पहले उन्होंने ऊपर की ओर दृष्टि डाली। जो मार्ग उतरते समय, अति ढलवान के कारण सुगम जान पड़ा था वही अब एक सीधी रेखा के समान, चोटी तक खड़ा दिखाई दिया इसलिए फिर ऊपर चढ़ना उन्होंने प्रायः असम्भव समझा। सोच विचार कर उन्होंने निर्धारित कर लिया कि नीचे उतरने से ही निस्तार होगा। तब वे शुष्क घास और झाड़ियों को, क्षत्रहीन सूखी शाखाओं को पकड़ पकड़कर एक नाले के तट पर आ पहुंचे। वहां एक ऊपर को उठी हुई शिला पर आरूढ़ होकर उन्होंने चहूं ओर दृष्टि डाली। उन्हें पर्वतों की अगम्य चोटियों और मनुष्य के चलने के लिये असम्भव जटिल जंगल के बिना और कुछ भी दिखाई न पड़ा उस समय सूर्य भी अस्त ही हुआ चाहता था। ऐसे, कड़े काल में, स्वामीजी महाराज के चित्त में चिन्ता की रेखा रह रह कर उत्पन्न होती थी। वे सोचते थे कि ऐसी सुनसान निर्जन वन में, जहाँ पीने को पानी नहीं, निशा के घोर शीतपात से परिमाण पाने के लिए अग्नि जलाने का कोई साधन नहीं, मेरी क्या दशा होगी। अन्त में उन्होंने यही निश्चय किया-

पुरुषार्थ और यत्न को कभी न त्यागे धीर,
सकल विघ्न बाध कर अन्त सफल हों वीर।

परन्तु उस विकट जंगल में ऐसे स्थानों में से होकर निकलना

thearyasamaj.org

पड़ा, जहाँ कण्टकाकीर्ण झाड़ियों में उनके वस्त्र उलझ कर खण्ड-खण्ड हो गये। नुकीले पत्थरों की ठोकरों से और काण्टों के चुभने से उनके पांव लंगड़े हो गये शरीर पर भी घाव दीखने लगे। रक्त बहता था, वेदना होती थी। अन्त को दुःख संकट सहते हुए बड़ी कठिनता से उस गहन वन को पार करके नीचे तुनानाथ पर्वत की तलेटी में-आ पहुंचे, वहाँ आकर उन्होंने देखा कि अब वे साधारण मार्ग पर गमन कर रहे हैं। उस समय निस्तब्ध, नीरव रजनी का राज्य था। सर्वत्र अन्धकार छा रहा था। इसलिये स्वामीजी बड़ी सावधानी से मार्ग टटोल टटोल कर चल रहे थे। वे बड़े ध्यान से मुख्य मार्ग से इधर-उधर होने से बचते थे। अन्ततः वे चलते-चलते एक ऐसे स्थान पर आ पहुंचे जहां कतिपय पर्ण-कुटिया दीख पड़ीं। पूछने पर पता लगा कि जिस मार्ग पर चल रहे हैं वह ओखी मठ को जाता है। महाराज आगे चल पड़े और बड़ी रात बीते ओखी मठ में पहुंचे।

शेष रात उन्होंने उसी मठ में निश्चिन्तता से काटी। प्रातःकाल जब सुखपूर्वक सो उठे तो उत्तर की ओर चल पड़े। परन्तु थोड़ी दूर जाकर उन्हें लौट आना पड़ा, क्योंकि मठ देखने की अभिलाषा उनके मन में ही रह गई थी। साथ ही वे वहां के कन्दरा-निवासी साधुओं की भी अवस्था को जानना चाहते थे। पीछे लौट आने से स्वामीजी को मठ देखने का एक अच्छा अवसर मिल गया। उस समय मन्दिर में ऐसे साधुओं की भरमार थी जो प्रायः पाखण्डपरायण थे। वे लोग बड़े आडम्बर से रहते थे। स्वामी जी के ज्ञान और गुणों पर उस मठ का मुख्य महन्त मोहित हो गया और चेला बन जाने के लिये उन्हें प्रेरणा करता हुआ बोला-''यदि हमारे शिष्य बन जाओ तो गद्दी के स्वामी हो जाओगे। लाखों रुपयों की सम्पत्ति तुम्हारे हाथ में हो जायेगी। तुम महन्त कहलाओगे इसलिए मान प्रतिष्ठा का भी पार न रहेगा। इस प्रकार स्वच्छन्दता पूर्वक यथेष्ट सुख भोगोगे।''

ओखी मठ के महन्त का वह प्रलोभन पूर्णसूत्र महात्यागी दयानन्द को बांधने के लिये उतना ही दृढ़ था, जितना ऐरावत हाथी को बद्ध करने के लिये सूत का कच्चा तार। महाराज ने महन्त को कहा कि यह तुम्हारा कथन, सब व्यर्थ है। मेरे पिता की सम्पत्ति आपकी पूजा पाठ के पाखण्ड द्वारा एकत्रित की पूंजी से कई गुणा अधिक है। जब मैं उसे भी काष्ठ-लोष्ठ समान त्याग आया हूं तो आप के धन धान्य की ओर कब ध्यान कर सकता हूं ? जिस उद्देश्य से प्रेरित हो कर मैंने सकल सांसारिक सुखों से मुख मोड़ा और ऐश्वर्यशाली पितृ-गृह को सदा के लिये छोड़ा है, मैं देखता हूं उस उद्देश्य पर न तुम चलते हो और न उसका तुम लोगों को कुछ ज्ञान ही है। इस अवस्था में चेला बनना तो दूर, मेरा तुम्हारे पास रहना भी असम्भव है।

वह महन्त स्वामी मुख से लक्ष्मी के तिरस्कार के वचन सुनकर कहने लगा कि अच्छा, बताइये-आपका उद्देश्य क्या है ? किस वस्तु की जिज्ञासा में मग्न तुम इतने कष्ट क्लेश उठा रहे हो ? श्री स्वामीजी ने उत्तर में कहा कि मैं सत्य योग विद्या और मोक्ष चाहता हूं। जब तक यह प्रयोजन सिद्ध न होगा तब तक तपश्चर्या करता हुआ मनुष्य मात्र के कर्त्तव्य, स्वदेशोपकार को, बराबर करता रहूंगा। वह महन्त उनके महात्याग और उच्च उद्देश्य को सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला, ''यह बहुत अच्छी बात है। पर कुछ दिन तो हमारे समीप निवास करो।'' स्वामीजी बहुत वार्तालाप में कुछ सार न देख उस समय तो मौन रहे, परन्तु अगले दिन प्रातःकाल ही उठ कर जोशी मठ की ओर चले गये।

जोशी मठ में संन्यासाश्रम की चौथी श्रेणी के बहुत से सच्चे महाराष्ट्र संन्यासी वास करते थे। श्री स्वामीजी ने भी उन्हीं के समीप अपना निवास नियत किया। वहां उन्हें कई योगीजन सत्संग के लिए मिल गये। स्वामीजी ने उनसे कई नवीन भेद भी प्राप्त किये और साथ ही विद्वान् साधु-सन्तों से परमार्थ-विषयक वार्त्तालाप करते रहे।

पांचवाँ सर्ग

जोशी मठ से प्रस्थान कर स्वामीजी बद्रीनारायण पहुंचे। वहां के मुख्य महन्त उस समय 'रावलजी' थे। स्वामीजी ने उनके निकट कई दिन तक निवास किया। कभी कभी रावलजी के साथ स्वामीजी का वेदों और दर्शनों पर बड़ा वाद विवाद छिड़ जाया करता था। एक दिन स्वामीजी ने रावलजी से पूछा कि आसपास के पर्वतों में कोई सच्चा योगी भी निवास करता है ? रावल जी ने अति शोक के साथ कहा कि इन दिनों इधर कोई ऐसा योगी महात्मा नहीं है। परन्तु मैंने सुना है कि इस मन्दिर के दर्शनार्थ प्रायः योगी जन आया करते हैं।

वहाँ श्री स्वामीजी ने दृढ़ संकल्प कर लिया कि इस समस्त प्रान्त में और विशेषतः पार्वत्य प्रदेशों में सर्वत्र भ्रमण करके ऐसे महापुरुषों का अन्वेषण अवश्यमेव करेंगे। एक दिन सूर्योदय के साथ वे बद्रीनारायण से चल पड़े और पर्वत के पाँव के साथ चलते हुए अलखनन्दा नदी के तट पर जा पहुंचे। नदी के दूसरे पार एक 'मांस' नामक ग्राम था। उसे वे पहले कभी देख चुके थे, इसलिए उस पर न जा कर पूर्वावलम्बित तट के साथ साथ नदी के ऊपर की ओर जाने लगे। पर्वतों की ऊँची-ऊँची चोटियाँ, सघन हिममयी चिट्टी चादर ओढ़े स्फटिक की भाँति, ऐसी चमक रही थीं कि देखकर आंखों में चकाचौंध लगता था, अलखनन्दा का जल उसके बहाव में पड़ी हुई शिलाओं से टकरा कर चट्टानों से टक्कर खाकर गिरता था, उछलता था, फेन फेंकता था, गरगराता था, गर्जता था, और चीत्कार करता हुआ बड़े वेग से नीचे को दौड़ा चला जा रहा था। इस प्रकार श्री स्वामी जी अपने चारों ओर प्रकृति के स्वाभाविक सौन्दर्य को निहारते हुए नदी के स्त्रोत की ओर बढ़ रहे थे। मार्ग बड़ा बीहड़ और विषम था। अति कष्ट उठा कर बड़ी कठिनता से वे अन्त को नदी के निर्गम स्थान पर जा पहुंचे। वहां उन्होंने देखा कि मैं इन स्थानों से अपरिचित हूं, हिमाच्छादित नालों से, निकलने के मार्गों से और पर्वत मालाओं के भेदों से अजान हूं। उन्हें वहाँ सब ओर गगन भेदी गिरिशिखर ही दिखाई दिये और आगे चलने के मार्ग का सर्वथा अभाव ही जान पड़ा। इस अवस्था में थोड़ी देर के लिए वे किंकर्तव्य की चिन्ता में निमग्न हो गये। अन्त में मार्ग-अन्वेषण के निमित्त उन्होंने अलखनन्दा पार करने का निश्चय किया।

स्वामीजी के शरीर पर वस्त्र बहुत ही थोड़े थे। इसलिए हिमप्राय हेम्नी प्रदेश का अतिशीतल पवन तन को तीर की तरह आरपार करने लगा। क्षण क्षण में बढ़ने हुए शीत का सहन करना एक बार तो उन्हें असम्भव सा जान पड़ा। प्यास के कारण मुख सूख रहा था, होंठ शुष्क हो रहे थे। कण्ठ में कांटे पड़ गये थे और क्षुधा ने भी घोर रूप धारण कर रखा था, इन दोनों बाधाओं से बचने के लिए

thearyasamaj.org

स्वामीजी ने हिम का टुकड़ा लेकर चबाया, परन्तु उसने कुछ भी सहारा न दिया। उदर की आग उससे शान्त न हुई। तब वे नदी पार करने में साहस से प्रवृत हुए। उस जगह अलखनन्दा कहीं तो बहुत गम्भीर और कहीं तो एक दो हाथ गहरी थी। उसका पाट आठ दस हाथ का था। वह हिम के छोटे छोटे तिरछे और नुकीले टुकड़ों से भरी हुई थी। नदी को चीर कर पार करते समय ये नुकीले हिमखण्ड श्री स्वामीजी महाराज के नंगे पांव पर बार बार आघात करते थे। इससे उनके पैरों के तलुए छिल गये, उंगलियों में घाव हो गये, और स्थान स्थान से रक्त बहने लगा। परन्तु अति शीतलता के कारण उनके पाँव ऐसे सन्न हो गये थे कि कितने ही काल तक उन्हें इन बड़े बड़े घावों का भान ही न हुआ। इस समय भूमि, आकाश और पवन सभी अतिशीतल हो रहे थे। इन सबने स्वामी-शरीर की स्वाभाविक ऊष्मा को अभिभूत कर लिया था। महाराज की काया पर शून्यता छाई जा रही थी। उनके हृदय पर अचेतनता धीरे धीरे बढ़ रही थी। यहाँ तक कि वे शून्य अवस्था में मूर्छा खाकर हिममय जल में गिरने को ही थे कि उनके अन्तःकरण में चैतन्य की रेखा चमक उठी, और वे सम्भल गये। अपने आप को थाम कर महाराज ने विचारा कि यदि एक बार भी मैं यहां गिर गया तो फिर न उठ सकूंगा, यहीं सन्न होकर समा जाऊंगा।

वे साहस से सावधान होकर बड़े बल के साथ उस नदी से बाहर निकले और दूसरे तट पर जा पहुंचे। वहाँ पहुंचकर भी उनकी अवस्था कुछ काल पर्यन्त मृततुल्य बनी रही। परन्तु तो भी साहस का अवलम्बन कर उन्होंने अपने तन के उपरिभाग के सारे कपड़े उतार कर, उनके साथ पांव से लेकर घुटनों तक का सारा भाग लपेट लिया। उस समय वे चलने में अशक्त, हिलने जुलने में असमर्थ और व्याकुल चित्त थे। विगतशक्ति खड़े-खड़े इस बात की प्रतीक्षा करते थे कि कोई सहायता मिल जाय तो इस संकट समाकुल स्थान से निकल कर कहीं आगे चलूं। ऐसे सुनसान शीतप्रधान प्रदेश में कोई मनुष्य मिल जायेगा यह आशा भी नहीं बंधती थी। वे उस स्थान में निस्सन्देह विवश थे, निस्सहाय थे, अजान थे, निराश थे, परन्तु उत्साहहीन नहीं थे, इसलिए विकसित लोचनों की ज्योति को चारों ओर संचालन कर रहे थे। जैसे घटाटोप से घिरी हुई अमावस्या की महाकाली रात्रि में अकस्मात् बिजली की रेखा, दौड़ जाय, ठीक वैसे ही स्वामी जी को दो पहाड़ी पुरुष सामने से आते दिखाई दिये। उन आगन्तुक भद्रजनों ने एक परमहंस को दुःखाकुल दशा में पड़ा देख पहले तो नमस्कार किया और फिर समादरपूर्वक निवेदन किया कि महाराज ! आइए हमारे संग हमारे घर चलिये। आप शीत से ताड़ित और भूख प्यास से व्यथित हैं। हमारे गृह पर आपको पूर्ण सुख और पुष्कल भोजन मिल जायेगा। स्वामीजी की क्लेश कहानी को सुनकर उन पहाड़ियों ने कहा कि आप चिन्ता न करें, हम आपको 'सिद्धपत' तीर्थ स्थान तक भी पहुंचा देंगे। स्वामीजी चलने में असमर्थ थे, इसलिये उन्होंने उनका कथन स्वीकार नहीं किया और कहा, ''महाराज'' खेद हैं मैं आपकी इस कृपापूर्ण सहायता को स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि मुझमें चलने की किञ्चित् भी शक्ति नहीं है।'' उन भद्र गृहस्थों ने फिर भी भक्ति भाव से आग्रह और अनुरोध किया कि हमारे साथ अवश्य पधारिये। परन्तु स्वामी जी यह कह कर कि इस समय मैं हिलने जुलने की अपेक्षा यहाँ मर जाना ही उत्तम समझता हूं मौन हो गये, फिर उनके कथन पर उन्होंने कर्णपात नहीं किया। अन्त को वे पहाड़ी मनुष्य अति खेद के साथ वहाँ से चल पड़े और किञ्चित् काल ही में पर्वत के टीलों और उतराई की ओट में स्वामी जी की दृष्टि से ओझल हो गये।

चिरकाल तक वहीं विश्राम लेने से स्वामी जी का शरीर स्वस्थ और उनका चित्त शान्त हो गया। उसी समय चलकर वे 'वसुधारा' तीर्थस्थान पर जा पहुंचे। वहाँ थोड़ी देर विश्राम लेने के अनन्तर फिर चल पड़े और 'मग्रम' के समीपवर्ती प्रदेशों से होते हुए रात के आठ बजे बद्रीनारायण में जा विराजे। उनकी देह की दशा को देखकर रावल जी तथा उनके संगी-साथी सब घबरा गये। विस्मित होकर उन्होंने पूछा-''आप आज सारा दिन कहाँ रहे ? आपकी अवस्था ऐसी क्यों हो रही है ?'' उस समय स्वामी जी ने उन्हें अपनी सिद्धों के दर्शनार्थ की गई संकट-संकुल यात्रा आद्योपान्त कह सुनाई। रावलजी आदि ने स्वामी जी को कुछ भोज्य पदार्थ दिये। उनको खाते हुए उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा कि अशक्त शरीर में अब शक्ति का संचार हो रहा है, निकला हुआ सामर्थ्य फिर प्रवेश कर रहा है। स्वामी जी फिर सुखपूर्वक रात भर सोते रहे। दूसरे दिन सवेरे ही शीघ्र उठकर रावलजी से प्रस्थान निमित्त आज्ञा माँगी। सम्मानपूर्वक एक दूसरे से मिलकर स्वामीजी महाराज ने वहाँ से प्रस्थान किया और रामपुर को चल पड़े। चलते चलते उसी सायं को एक योगी के स्थान पर आ निकले वह महात्मा बड़ा तपस्वी था। तत्कालीन ऋषियों और साधु सन्तों में उच्च-कोटि का ऋषि होने का गौरव रखता था। स्वामीजी महाराज ने ऐसे महापुरुष के पास ही रात्रि विश्राम लेना उचित समझा। योगीराज जी के साथ स्वामीजी धार्मिक विषयों पर बहुत देर तक वार्तालाप करते रहे। वहाँ स्वामीजी ने अपने संकल्पों को पहिले से भी अधिक दृढ़ कर लिया। प्रातः काल उठते ही यात्रा आरम्भ कर दी। मार्ग में कई वनों और पर्वतों को उलंघन करते चिलका घाटी उतरकर रामपुर में आ गए। इस नगर में सदाचार और आध्यात्मिक जीवन के लिए प्रसिद्ध, रामगिरि नाम के एक महात्मा निवास करते थे। श्री स्वामी जी ने उन्हीं के पास अपना आसन लगाया। उन्होंने उस पुरुष की प्रकृति में यह विचित्रता देखी कि वह सारी रात जागता रहता और ऊँचे ऊँचे बातें करने लग जाता था। कभी चिल्लाने लगता था और कभी ऊँची ध्वनि से रोदन करता हुआ जान पड़ता था। स्वामी जी जब कौतूहलवश उठकर देखने गये तो उन्हें वहां उसके बिना अन्य कोई दृष्टिगोचर न हुआ। अत्यन्त विस्मित होकर उन्होंने उस महात्मा के चेलों से पूछा कि रात को यह क्या कौतुक होता है ? वे बोले ''गुरुजी महाराज की ऐसा करने की प्रकृति ही है।'' परन्तु स्वामीजी इतने उत्तर से कब सन्तुष्ट होने वाले थे। अन्त में उन्होंने महात्मा जी से जा पूछा, और कई बार एकान्त में चर्चा की, तब स्वामी जी को सारा भेद ज्ञात हो गया। स्वामी जी ने यह सार निकाला कि यह पूर्ण योगी नहीं है, प्रत्युत अभी अधूरा है। हाँ इसकी योग में गति अवश्य है। इसे योग के पूरे फल अभी प्राप्त नहीं हुए। परन्तु जिस वस्तु को मैं प्राप्त करना चाहता हूँ वह इसके पास नहीं है।

छठा सर्ग

कालान्तर में रामपुर से चलकर श्री स्वामी जी काशीपुर होते हुए 'द्रोणासागर' में आये और उन्होंने सारा शरद्ऋतु यहीं बिताया।

thearyasamaj.org

'द्रोणासागर' में निवास करते समय एक बार उनके हृदय में यह विचार स्फुरित हुआ कि हिमालय के हिममय भाग में जाकर देह त्याग देना चाहिए। परन्तु तुरन्त दूसरे विचार उत्पन्न हो आये कि अभी ज्ञान संचय करना उचित है। शरीर त्यागना हो तो पूर्ण ज्ञान होकर त्यागना चाहिए। भागीरथ के प्रयत्न से प्रेरित जैसे गंगाजी का पवित्र प्रवाह, हिमालय के उत्तुंग शिखरों को त्याग कर, नीचे समभूमि की ओर बहने लगा था वैसे ही ज्ञान संचय के विचारों से संचालित, योगाभ्यास से विमलात्मा, स्वामी दयानन्द जी हिमालय में समाधि ले लेने के विचार को त्यागकर, पार्वत्य प्रान्त को छोड़कर, समभूमि पर विचरते हुए किसी ज्ञानी गुरु के अन्वेषण में प्रवृत्त हुए.

द्रोणासागर से स्वामी जी मुरादाबाद आये। वहाँ से सम्भल, गढ़ मुक्तेश्वर में होते हुए गंगा-तट पर आ पहुंचे। उस समय उनके पास कई धर्म पुस्तकों के अतिरिक्त शिव-सन्ध्या, हठ प्रदीपिका, योगबीज और केशराणी संगति नामक पुस्तकें भी थीं। उनमें से कई पुस्तकों में नाड़ीचक्र का बड़ा विस्तृत वर्णन था। वह श्रान्त करने वाला विषय न तो कभी पूर्ण रीति से स्वामी जी की बुद्धि में समाया और न ही वे उसे ध्यानपूर्वक स्मरण ही कर सके। उसकी सत्यता में उन्हें सदैव सन्देह रहा करता था। यहाँ तक, उन्होंने साधारण साधनों से उस संशय को निवारण करने का यत्न भी किया। पर यह संशय निवृत्त होने के स्थान पर दिनों दिन बढ़ता ही गया। गंगा-तट पर विचरते हुए दैवयोग से एक दिन उन्होंने जल में एक शव बहता देखा। शव को देखते ही वे मन ही मन विचारने लगे कि नाड़ी चक्र के विषय में जो संशय सदा बना रहता है आज इस शव द्वारा परीक्षा करके उसे मिटा लेना चाहिए। मन में यह आते ही उन्होंने पुस्तकों को नदी तट पर रख दिया, वस्त्र सम्भाल कर गंगा प्रवाह में कूद पड़े। और तुरन्त ही बहते हुए शव को पकड़कर किनारे पर ले आये। अपने उपकरणों में से एक तीक्ष्ण चाकू निकालकर लगे शव को चीरने। सावधानी से चीरकर प्रथम हृदय निकाला। उसकी आकृति को, स्वरूप को और लम्बाई चौड़ाई को पुस्तक लिखित वर्णन के साथ देर तक मिलाते रहे। इसी प्रकार सिर, ग्रीवा आदि अंगों की भी तुलना की। नाभि आदि चक्रों का भी परीक्षण किया। परन्तु उन पुस्तकों में वर्णित चक्रों और अंगों को उन्होंने वास्तविक चक्रों और अंगों से लवलेश मात्र भी मेल खाते न देखा उस परीक्षण से स्वामी जी को पूर्ण निश्चय हो गया कि इन पुस्तकों के ऐसे लेख, सब काल्पनिक हैं। इससे उन्होंने उन पुस्तकों को तुरन्त ही फाड़ कर खण्ड खण्ड कर डाला और शव के साथ ही गंगा के प्रवाह में बहा दिया। उसी समय से विचारते हुए वे इस परिणाम पर पहुंचे कि वेदों, उपनिषदों, पातञ्जल और सांख्य शास्त्र के अतिरिक्त शेष समस्त पुस्तकें जो विज्ञान और योग पर लिखी गई हैं, मिथ्या और अशुद्ध हैं।

ऐसे ही गंगा के साथ साथ चलते हुए सम्वत् १९१२ की समाप्ति पर स्वामी जी फर्रुखाबाद गये। वहाँ से श्रृंगीरामपुर होते हुए छावनी से पूर्व दिशा वाली सड़क से कानपुर की ओर प्रस्थान किया। सम्वत् १९१३ में पाँच मास तक स्वामी जी कानपुर और प्रयाग के मध्यवर्ती स्थानों में विचरते रहे। भाद्रपद के प्रारम्भ में गंगा के तीर पर विचरते हुए मिर्जापुर में जाकर एक मास से कुछ अधिक समय तक विन्ध्याचल अशोलजी के मन्दिर में जा विराजे। आश्विन मास के आरम्भ में काशी आये। वहाँ वरुणा और गंगा के संगम के पास ही एक गुफा में जाकर टिके। उस गुफा पर उस समय भवानन्द सरस्वती का अधिकार था। काशी में रहते हुए स्वामी जी का परिचय काकाराम, राजाराम इत्यादि अनेक शास्त्रियों से हो गया। इस बार आप केवल बारह दिन ही काशी में रहे।

महाराज काशी से चलकर आश्विन सुदी २, सम्वत् १९१३ को चण्डालगढ़ में दुर्गाकुण्ड के मन्दिर में दस दिन तक रहे। वहाँ चावल खाना सर्वथा परित्याग कर दिया। केवल दूध पर ही निर्वाह करके रात दिन योग-विद्या के अध्ययन और अभ्यास में परायण रहते थे। हिमालय में विचरने वाले और गंगा-तीर पर अटन करने वाले अच्छे अच्छे साधुओं में भी प्रायः यह दोष पाया जाता है कि पानी-लाग से बचने के लिए वे भाँग का सेवन करने लग जाते हैं। इस प्रदेश में आया हुआ कोई नवीन साधु उन्हें मिल जाय तो उसे भी जल दोष से बचे रहने की औषधि विजया ही बताते हैं। इस प्रकार संगति दोष से विजया-सेवन के संस्कार साधुओं में अतीव प्रबल हैं। इस व्यापक संस्कार के प्रभाव से परमहंस स्वामी दयानन्द जी भी न बचे ! जब वे चण्डालगढ़ में थे तो यह संसर्ग-जन्य दोष उनमें लगा हुआ था। कई बार भाँग के प्रभाव से वे अचेत हो जाया करते थे।

एक दिन का वर्णन है कि स्वामीजी चण्डालगढ़ से निकलकर उसके निकटवर्ती एक ग्राम को चल पड़े। मार्ग में उन्हें एक पुराना साथी मिला। उससे शिष्टाचार आदि करके गाँव के दूसरी ओर एक शिवालय में रात्रि को विश्राम लेने लगे। जब, वे भाँग की मादकता में, बेसुध सो रहे थे तो उन्होंने स्वप्न-लीला में देखा कि, महादेव और पार्वती दोनों उनके समीप खड़े परस्पर बातें कर रहे हैं। गौरी ने शंकर से कहा कि महाराज, अच्छा हो यदि दयानन्द सरस्वती का विवाह हो जाय परन्तु शिवजी भंग का संकेत करके अपनी सम्मति पार्वती के प्रस्ताव के विरुद्ध देते थे। इतने में ही स्वामीजी की तंद्रा टूट गई। स्वप्न को स्मरण कर उन्हें बहुत दुःख और क्लेश हुआ। उस समय आकाश मेघावृत था। मूसलाधार वर्षा हो रही थी। स्वामीजी मन्दिर के भीतर से निकल कर वराण्डे में आये। वहां नन्दी वृषभ की एक विशाल मूर्ति स्थापित थी। उन्होंने अपने पुस्तकादि उपकरण वृषभ देवता की पीठ पर रख दिये, और आप उसके पीछे बैठ विचार में निमग्न हो गये। विचारते हुए उनकी दृष्टि अचानक मूर्ति के भीतर जा पड़ी। उन्हें वहां कोई मनुष्य छिपा बैठा दिखाई दिया। कौतूहलवश स्वामीजी ने ज्यों ही उसकी ओर हाथ पसारा वह अति भयभीत होकर कांप उठा और तत्काल छलांग मारकर, एकदम ग्राम की ओर भाग गया। उसके पश्चात् उस नन्दी वृषभ के भीतर प्रवेश कर स्वामीजी सुख से सो रहे। प्रातःकाल होने पर वहाँ एक वृद्धा स्त्री आई और उसने आकर उस वृषभ देवता का पूजन किया। स्वामीजी वहीं तन्द्रा में बैठे यह दृश्य देखते थे। वह स्त्री पूजा करके चली गई, परन्तु स्वल्प समय में ही कुछ गुड़ और दही लेकर फिर लौट आई. उस भोली ने स्वामीजी को मूर्ति का अभिमानी देवता समझ लिया। इसलिए उसने उनका भी अर्चन किया और भक्ति-भावना से दही गुड़ का नैवेद्य उनको निवेदन किया। साथ ही कहा-''हे नन्दी वृषदेव ! आप इस मेरी भेंट को ग्रहण कीजिये और दयालु होकर इसमें से कुछ भोग लगाइये।'' स्वामीजी को भी उस समय भूख बहुत सता

thearyasamaj.org

रही थी। उन्होंने सारा नैवेद्य खा लिया। दही बहुत ही खट्टा था। उनकी भाँग की मादकता को तुरन्त उतारने में एक औषध बन गया। भाँग का प्रभाव दूर होने पर उन्हें आराम प्रतीत हुआ।

चैत्र १९१४ में वहाँ से आगे चलकर स्वामीजी महाराज ने नर्मदा नदी का स्त्रोत देखने की लालसा से यात्रा आरम्भ की। पहाडी मार्ग बड़ा बिखड़ा था। चलते हुए वे किसी से भी मार्ग न पूछते थे। दक्षिणाभिमुख चुपचाप चलते चले जाते थे। इस प्रकार चलते हुए मार्ग में एक विस्तृत धना जंगल आ गया। उन्हें वह वन जनसंचार शून्य जान पड़ा, परन्तु विशेष देखने से सुदूर झाड़ियों में अनियमित रूप से, कुछ मलिन झोंपड़ियां दिखाई पड़ी। स्वामीजी उस समय क्षुत्पिपासा से पीड़ित थे, इसलिये वे एक झोंपड़ी में गये और उसके अधिपति से मांग कर कुछ दूध ग्रहण किया। वहां से आगे चलकर कोई पौन कोस पहुंचने पाये थे कि मार्ग का लोप दिखाई दिया। हाँ छोटी छोटी पगडँडियां, जो वास्तव में भेड़-बकरियों के आने जाने से ऐसे वनों में बन जाया करती हैं चारों ओर फैली हुई थीं। उन्होंने उनमें से एक को चुन लिया और चल पड़े। थोड़ी दूर जाकर ही वे एक निविड़ निर्जन वन में जा फँसे। इस वन में बेरी के बहुत से वृक्ष थे। घास अति घनी और लम्बी थी। ऐसे स्थान में ऐसी पद-पंक्तियां भी प्रलुप्त हो गई थीं। स्वामी जी थोड़े समय के लिए वहाँ ठहर कर यह सोचते ही थे कि किस ओर से आगे बढ़ें, इतने में अचानक एक काला रीछ बड़े वेग से दौड़ता चला आता सामने दिखाई दिया। वह हिंसक पशु चिघाड़ता हुआ अपने पिछले पांव पर खड़ा हो गया और मुंह खोलकर उनको खाने के लिये आगे की ओर लपका। स्वामीजी महाराज कुछ क्षण तो आश्चर्य चकित, निष्क्रिय होकर खड़े रहे, परन्तु जब अन्त में देखा कि वह पशु कुचलने ही लगा है तो अपना सोटा उन्होंने रीछ की ओर बढ़ाया। वह पशु स्वामीदण्ड को देखकर वहां से उलटे पांव भाग गया। उस भालू का चिंघाड़ना सुनकर जिन झोंपड़ियों में स्वामीजी ने दुग्ध ग्रहण किया था वहां के लोग शिकारी कुत्ते लेकर घटना-स्थल पर आ गये। वे परमहंसजी को सुरक्षित देख प्रसन्न हुए और बोले-''महाराज इस जंगल में यदि और थोड़ा भी आगे बढ़ोगे तो आपको घोर संकटों के सन्मुख होना पड़ेगा। इस पर्वत में इस सघन वन में बड़े बड़े विकट बनैले पशु वास करते हैं। यहां आपको सिंह आदि अति क्रूर और भयंकर जीव अवश्यमेव मिलेंगे। कृपा करके आप हमारे साथ हमारे गाँव में पीछे चले चलिये। हम आप की सेवाशुश्रूषा करेंगे।''

स्वामीजी ने उन वनवासी हितैषुओं के वचन आदर से सुने और फिर कृतज्ञता के साथ कहा ''आप मेरे लिये चिन्ता न कीजिये। मेरे कुशल-मंगल का भय छोड़ दीजिये। क्योंकि मैं सकुशल और सुरक्षित हूं।'' स्वामी जी महाराज ने नर्मदा का स्त्रोत देखने का दृढ़ संकल्प कर लिया था। वे जानते थे कि मार्ग में भीषण प्रकृति के हिंसक जन्तुओं से पूर्ण, भयावने वन आयेंगे। इसलिये, पहिले उन्होंने अपने हृदय से समस्त भय निकाल दिये और फिर वे स्त्रोत दर्शन की कामना से चले। ग्रामीण भक्तों ने देखा कि भय की बातों से श्री परमहंसजी का हृदय यत्किंचित् भी डांवाडोल नहीं हुआ और वे अपने विचार में पक्के हैं, तो उन्होंने स्वामीजी को एक ऐसा लट्ठ दिया जो उनके अपने सोटे से मोटा और लम्बा था। फिर स्वामीजी के धैर्य को धन्य कहते हुए वे लौट गये।

धृति धर्म का मूल हैं, है जीवन का सार,
की ज़िसने धारण धृति, उस पाये फल चार।
ध्रुवता धरणी पे धरें, पांव निश्चय के जो,
उनको बाधक कार्य में, भय संकट न हो।

स्वामीजी ने ग्रामीणों का दिया हुआ लट्ठ वहीं फेंक दिया और अति साहस से आगे बढ़ने लगे। उस दिन मार्ग में उन्हें बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं। चलते चलते सायंकाल हो गया, पर दूर-दूर तक मानव बस्ती का कोई चिन्ह दिखाई न देता था, न ही मार्ग में आता जाता कोई मनुष्य ही मिलता था। चारों ओर सघन वन था जिसमें स्थान स्थान पर मत्त हस्तियों के उखाड़े हुए ऊँचे ऊँचे पेड़ भूतल-शायी हो रहे थे। सर्वत्र सुन-सान और सन्नाटा था, परन्तु स्वामी दयानन्द का हृदय निष्कम्प, चित्त निश्चिन्त, बुद्धि स्थिर और मन क्षोभरहित था। इस विकट विस्तीर्ण वन को पार करते हुए श्रीस्वामीजी को बड़ा कष्ट सहन करना पड़ा। प्रथम तो उस वन में प्रवेश करते ही छोटी छोटी कण्टकाकीर्ण अविरल झाड़ियों ने उनके तन को छलनी बनाना आरम्भ कर दिया। ज्यों ज्यों वे आगे बढ़ते थे उनके शरीर के वस्त्र पग पग पर काँटों में फँसकर, झाड़ियों में अटक कर, और शाखाओं में उलझ कर उन्हें पीछे को खींचते थे। इस बंधन से बचने के लिए उन्हें अपने वस्त्रों को फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर देना पड़ा। पर क्या इतने से ही विपत्ति की समाप्ति हो सकती थी ? तीक्ष्ण कांटों से लदी हुई घनी झाड़ियों की डालियों और छोटी-छोटी टहनियों ने परस्पर ओत-प्रोत होकर, किसी के लिए निकलने का मार्ग न छोड़ा था। स्वामीजी को थोड़ी देर तक तो वह वनदुर्ग उल्लंघन करना दुस्तर दीखने लगा। उस समय वे मानों कांटों के कोट में से लांघ रहे थे। सीधे खड़े खड़े चलना वहाँ असम्भव था। टेढ़े होकर आगे बढ़ना भी महादुष्कर था। ऐसे स्थानों में स्वामीजी घुटनों के सहारे सरक कर और पेट के बल रेंग कर आगे निकले। अनेक बार उनके पांव पर आघात हुए, तलुवे लहू से लाल हो गये, देह अगणित काँटों के चुभने से रक्तस्त्राव करने लगी, तन पर से कहीं कहीं मांस की बोटियां उड़ गई, परन्तु धुन के धनी स्वामी दयानन्दजी सकल विघ्न बाधाओं को अपने साहस से पार करके अन्त को उस वन दुर्ग पर विजयी हुए। जब वे वन से बाहर आये तो बहुत घायल थे और उनकी अवस्था अधमुई सी हो रही थी।

उस समय सर्वत्र अन्धकार छा रहा था। दृष्टि पसारने पर कुछ भी दृष्टिगोचर न होता था। यहाँ भी मार्ग कहीं प्रतीत न होता था, पर स्वामीजी थे कि इतने कष्ट पाने पर भी उत्साहहीन नहीं हुए। उन्होंने अपनी अग्रगति को बन्द नहीं किया। वे इस अन्धकार पूर्ण रात्रि में इस आशा से चले जा रहे थे कि कहीं तो मार्ग मिल ही जायेगा। आगे जाकर ऐसे भयानक प्रदेश में पहुंचे, जहां, चारों ओर पर्वत और टीले ही दृष्टिगत होते थे। वह स्थान वनस्पति से ढका हुआ था। परन्तु उन्हें वहाँ मानव-निवास के कुछ चिन्ह प्रतीत होने लगे। ज्यों ही, कुछ आगे गये तो उन्हें टिमटिमाते हुए दीपक दिखाई पड़े। ये दीपक मानों आने वाले पथिक को वहाँ पहुंच जाने की बधाई देते हुए उसका स्वागत कर रहे थे। समीप जाने पर स्वामी जी को गोबर के ढेर से घिरी हुई कुछ झोंपड़ियां दिखाई दीं। उन कुटियों से थोड़ी दूरी पर स्वच्छ जल की एक धारा बह रही थी। उस जल धारा के

thearyasamaj.org

तट पर बकरियों का एक रेवड़ चर्वन कर रहा था। वहीं एक विशाल वृक्ष के नीचे स्वामीजी ने विश्राम के लिए स्थान बनाया। यह वृक्षराज खुली भूमि पर शाखाओं का एक चँदुआ सा ताने था। इसके नीचे एक कुटिया भी थी।

उस समय स्वामीजी अपने घावों पर विशेष ध्यान देकर निद्रा-देवी की गोद में चले गये। सवेरे उठने पर शौचादिक से निवृत्त होकर उन्होंने नदी जल से अपने घावों को धोया। हाथ पांव प्रक्षालन किये। दण्ड को भी जल से साफ कर लिया। तत्पश्चात् सन्ध्योपासना में बैठना ही चाहते थे कि उन्हें एक घोर गर्जन सुनाई दिया। इसे उन्होंने किसी जंगली पशु की ध्वनि समझा। परन्तु थोड़ी देर में वे क्या देखते हैं कि एक टमटम चली आ रही है। वे समझ गये कि यह उच्च गर्जना इस गाड़ी की ही थी। कुछ काल अनन्तर स्त्री-पुरुष और बालक बालिकाओं का एक समूह उन झोंपड़ियों में से बाहर निकला। उनके साथ बहुत सी गायें और बकरियां थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि वे लोग किसी धार्मिक त्योहार की रीति का पालन करने के लिए गत रात्रि को वहाँ आये थे। जब उस जन समूह ने नदीतीर पर एक परमहंस को बैठा देखा तो वे उनके समीप आये। उन्होंने आकार आदि से यह भी समझ लिया कि यह सन्त इस प्रान्त के नहीं और इन स्थानों से अपरिचित हैं। उन्होंने आदर आदि प्रदर्शन करके स्वामीजी के इर्द-गिर्द घेरा डाल दिया। अन्त में एक वृद्ध ने पूछा-"महाराज आप ! कहाँ से पधारे हैं ?" स्वामीजी ने उत्तर दिया-"मैं काशी से आया हूं और नर्मदा नदी का स्त्रोत देखने के लिए जा रहा हूं।"तत्पश्चात् स्वामीजी उपासना में निमग्न हो गये और वे लोग भी वहाँ से चले गये। आधे घन्टे के पश्चात् उस जनमन्डली का प्रधान पुरुष दो पर्वतीय मनुष्यों को साथ ले स्वामीजी के पास आया और एक ओर बैठ कर उसने स्वामीजी से अपनी झोंपड़ियों में पधारने की प्रार्थना की। पहले आने वाले लोगों की ओर से वह वास्तव में एक प्रतिनिधि होकर आया था, परन्तु स्वामीजी ने यह जानकर कि ये सब लोग मूर्ति-पूजा परायण हैं, उसका कुटियों में जाने का निमन्त्रण अस्वीकार कर दिया। उस प्रधान पुरुष ने अपने साथियों को अग्नि प्रज्वालन का आदेश देकर कहा कि तुम दोनों यहाँ ही रहो और रात्रि भर जागते हुए सावधानी से परमहंसजी की रक्षा करो। तत्पश्चात् उस श्रद्धालु भक्त ने हाथ जोड़कर स्वामीजी से भोजन के लिए प्रार्थना की। स्वामीजी ने उत्तर दिया कि मैं आज कल अन्न ग्रहण नहीं करता किन्तु कुछ दूध ही पर निर्वाह किया करता हूं। यह सुन कर उस सदय-हृदय मुखिया पुरुष ने स्वामीजी से उनका तूँबा माँग लिया। वह उसे लेकर कुटिया की ओर चला आया। फिर, थोड़ी देर पीछे दुग्ध से आकण्ठपूर्ण तूँबा लेकर स्वामी-सेवा में उपस्थित हुआ। स्वामीजी ने उसमें से कुछ दूध ग्रहण कर लिया। वह प्रधान पुरुष परमहंसजी को नमस्कार आदि से पूजन करके जब स्वस्थान को जाने लगा तो उसने फिर उन दोनों पुरुषों को सचेत किया कि सारी रात जागते हुए परमहंसजी का रक्षण करना। उस मुख्य व्यक्ति के चले जाने के पश्चात् स्वामीजी उसी स्थान पर विराजते रहे और रात होने पर वहीं सो गये। पिछले दिन के परिश्रम से उनका सारा शरीर श्रान्त था, इसलिए, उस रात उन्हें ऐसी गाढ़ निद्रा आई कि सूर्योदय के समय ही जागे। सन्ध्योपासनादि से अवकाश पाकर परमहंसजी ने फिर यात्रा आरम्भ कर दी। इसी प्रकार तीन वर्ष पर्यन्त श्री परमहंसजी नर्मदा तट पर पर्यटन करते रहे। इस अन्तर में उन्हें अनेक सन्त महात्माओं के सत्संग प्राप्त हुए। उन्होंने अपने अन्तः करण के सुवर्ण को, सन्तों के सत्संग और तपस्या की आग में तप्त करके, मल विक्षेप-आवरणरूप तीनों दोषों से विमुक्त कुन्दन बना लिया। उस समय उनका आत्मा अभ्यास की ऊपरी पैरियों पर पदार्पण कर रहा था। इतने में, वे स्वामी श्री विरजानन्दजी का विमल-यश श्रवण कर, विशेष ज्ञान की जिज्ञासा से मथुरा आ पहुंचे।

सातवाँ सर्ग

स्वामी श्री विरजानन्दजी का जन्म स्थान पंजाब प्रान्त अन्तर्गत करतारपुर के समीपवर्ती कोई ग्राम विशेष था। कहते हैं कि उनका जन्म ग्राम कपूरथला के पास बहने वाली बेई नामक नदी के तीर पर है। वे शारद शाखा के सारस्वत ब्राह्मण थे। उनका गोत्र भारद्वाज था। उनके पिता का नाम नारायणदत्त था। जब विरजानन्दजी पांच वर्ष के थे तो उन पर शीतला रोग का घोर आक्रमण हुआ। जीवन तो उनका बचा रहा, परन्तु वे इस रोग से चक्षुहीन हो गये। वे अभी ग्यारह वर्ष के ही थे कि उनके माता पिता का देहान्त हो गया। मातृ-पितृ विहीन, छोटे अन्धे भाई को बड़े भाई ने अनेक प्रकार से दुःख देना आरम्भ कर दिया। विरजानन्द स्वबन्धुओं के सताने से घर छोड़ने पर विवश हुए। घर से चलकर वे ऋषिकेश में आये। यह स्थान हिमालय के एक भाग से आवृत है, यहां वे अधिक काल गंगा जल में बैठ कर गायत्री जप में लगाया करते थे। इस प्रकार उनका एक वर्ष बीता। एक दिन स्वप्न में उन्होंने श्रवण किया विरजानन्द ! तुम अब यहां से चले जाओ। जो कुछ तुम्हारा होना था, सो हो गया।" वे इसे दैववाणी समझ कर वहां से कनखल चले आये। वहां वे पूर्णानन्द स्वामी से षड्लिंगादि व्याकरण के भाग पढ़ने रहे। ऐसा प्रतीत होता है कि विरजानन्दजी ने गृह-परित्याग के अनन्तर ही परमहंस वृत्ति धारण कर ली थी।

कनखल में अध्ययन समाप्त कर वे प्रयाग आदि तीर्थ स्थानों के पर्यटन में प्रवृत हो गये। एक दिन का वर्णन है कि सोरों में गंगा-स्नान करके विरजानन्दजी विष्णुस्तोत्र की आवृत्ति कर रहे थे। उस समय अलवर के राजा विनय सिंहजी वहां विद्यमान थे। वे स्तोत्र के उच्चारण और विरजानन्दजी के मधुर स्वर को सुनकर अतिशय प्रसन्न हुए। वार्तालाप में उनकी चमत्कारिणी प्रतिभा का परिचय पाकर राजा आश्चर्यमय हो गये। उन्होंने विरजानन्दजी को अपने साथ चलने के लिये अनुरोध किया। अति आग्रह से विवश होकर विरजानन्दजी ने कहा कि यदि हमसे तुम प्रति दिन पढ़ा करो तो मैं तुम्हारे साथ चल सकता हूं, नहीं तो व्यर्थ कालक्षेप करने के लिए नहीं चलूंगा। अलवर नरेश ने अध्ययन करने की प्रबल इच्छा प्रकट की और उन्हें अपने साथ अलवर लिवा ले गये। अलवर स्थान में खान-पान का पूर्ण प्रबन्ध राज्य की ओर से हो गया। ऊपर के फुटकर व्यय के लिए दो रुपये दैनिक मिलने लगे। महाराजा विनय सिंहजी नित्य प्रति तीन घण्टे उनसे अध्ययन करते। जब कोई राज्यसम्बन्धी विशेष विषय उपस्थित होता तो महाराजा स्वामीजी से भी परामर्श लिया करते। स्वामी विरजानन्दजी, प्रति दिन राजप्रासाद में ही नियत समय पर जाकर महाराजा को पढ़ाया करते थे। एक दिन स्वामीजी तो समय पर राजप्रासाद में पढ़ाने के लिये चले गये,

thearyasamaj.org

परन्तु अलवर-अधिपति उपस्थित न हो सके। कहते हैं कि वे उस समय वारांगनाओं के नृत्य-गायन में कालक्षेप कर रहे थे। स्वामीजी स्वस्थान पर लौट आये, परन्तु इतने विरक्त हो गये कि अपने ग्रन्थादि सभी उपकरण वहीं छोड़कर सोरों में आ विराजे। वहां थोड़े दिन ठहर कर मथुरा के समीपस्थ मुरसान के राजा के पास जाकर रहने लगे। राजा बलवन्त सिंह जी के आग्रह से मुरसान से भरतपुर चले गये। वहाँ छः मास यापन करके फिर सोरों चले आये। इसके पश्चात् विरजानन्दजी ने अपना स्थान मथुरा में नियत किया।

रेलवे स्टेशन से यमुना के विश्राम घाट तक जो राजपथ जाता है उसी राज मार्ग की एक और एक छोटी सी अट्टालिका में विरजानन्दजी विराजा करते थे। यही छोटा सा स्थान उनकी पाठशाला का भी काम देता था। उनके आहार के प्रबन्ध के लिए अलवर के महाराजा विनय सिंह जी सहायता देते थे और कभी कभी जयपुर के महाराजा राम सिंह जी भी। इसके अतिरिक्त मथुरा में आने वाले अनेक धनी लोग उनके विद्याबल से प्रेरित होकर स्वेच्छा से द्रव्यादि प्रदान कर जाया करते थे। विरजानन्दजी अन्नाहार बहुत कम करते थे। उनका प्रायः दुग्ध पर ही निर्वाह था। रात को बहुत थोड़ी देर के लिये सोते थे। ब्राह्ममुहूर्त में उठ स्नानादि करके प्राणायाम पूर्वक ध्यान में निमग्न हो जाते थे। सूर्योदय तक प्रातः-कृत्य से निवृत्त हो लेते थे। फिर अध्यापन कार्य में प्रवृत्त हो मध्यान्ह काल तक पढ़ाते रहते थे। उसके पश्चात् कुछ काल विश्राम लेकर फिर पढ़ाने लग जाते थे। चतुर्थ प्रहर तक अध्यापन होता रहता था। विद्यार्थियों को कभी कभी विशेष शिक्षायें भी दिया करते थे। प्रतिदिन सायं समय स्नानादि करके ध्यानावस्थित हो जाया करते थे। इस शोभन वृत्ति में श्री विरजानन्दजी के पुण्यमय जीवन के दिन बीतते थे। विरजानन्दजी की विचारशक्ति अति-प्रबल थी। वे विषय की तह में तुरन्त पहुंच जाते थे। वे असाधारण बुद्धि के कारण विख्यात हो गये थे। स्मरण शक्ति और धारण-शक्ति का तो कहना ही क्या है ? यदि कोई नवीन श्लोक दो एक बार भी उनके श्रुति-गोचर हो जाता तो वे, उसे इतने में ही स्मरण कर लेते, और फिर वह उनके स्मृति-पथ से कभी उतरने न पाता था। जो कुछ वे सुनते थे उनके मस्तिष्क में वह अंकित सा हो जाता। ऐसी स्मृति ईश्वर ही की देन समझनी चाहिये। इस अद्‌भुत स्मृति के कारण अनेक ग्रन्थ उनके कण्ठाग्र थे।

काशी आदि नगरों की पण्डित मंडली में उनका पाण्डित्य प्रख्यात था। जो भी शास्त्री विषय विरजानन्दजी के सन्मुख उठाया जाता था, वे उसका ऐसा उत्तम आलपन करते थे कि विद्वान् जन धन्य धन्य करने लग जाते थे। विरजानन्द एक स्पष्ट वक्ता, निष्कपट स्वभाव, और सरल वृत्ति साधु थे। वे ज्ञान-ध्यान में निमग्न रहने वाले अभ्यासी और उत्तम कोटी के दण्डी संन्यासी थे। दण्डीजी को अनार्ष ग्रन्थों से अप्रीति हो गई थी। इसलिये उनकी पाठशाला में कौमुदी, मनोरमा, शेखर आदि कोई भी व्याकरण का अनार्ष ग्रन्थ नहीं पढ़ाया जाता था। उनके विद्यार्थी व्याकरण के निघण्टु निरुक्त-अष्टाध्यायी और महाभाष्य प्रभृति ग्रन्थ पढ़ा करते थे। उन्हें श्रीमद् भागवत से भी अति घृणा थी। उसके पढ़ने से भी लोगों को रोका करते थे। संक्षेपतः जिस समय स्वामी दयानन्दजी मथुरा में आये उस समय श्री विरजानन्दजी की प्रतिभा व्याकरण-विद्या की दीप्ति अद्वितीय समझी जाती थी और वे आर्ष ग्रन्थों के एक प्रबल पक्षपाती तथा प्रचारक थे। दण्डीजी की आयु उस समय इक्यासी वर्ष की थी। सम्वत् १९१४ की भारी सैनिक हलचल प्रायः शान्त हो गई थी। अब यत्र तत्र ही उसकी सुलगती हुई चिंगारियाँ दिखाई देती थीं। शान्ति और समानता का घोषण-नाद भी दिग्दिगान्तर-गुंजाय मानकर चुका था कि कार्तिक सुदी २ सम्वत् १९१७ को स्वामी दयानन्द सरस्वती मथुरा में प्रविष्ट हुए और सीधे दण्डीजी की अट्टालिका पर चढ़ कर उसका द्वार खटखटाने लगे। दण्डीजी ने पूछा ''कौन है ?'' उत्तर मिला-''दयानन्द सरस्वती ''कुछ व्याकरण भी पढ़े हो ?'' ''महाराज ! सारस्वत आदि व्याकरण ग्रन्थ पढ़ा हूं।

यह सुनते ही दण्डीजी ने द्वार खोल दिया। स्वामी दयानन्दजी ने भीतर प्रवेश करके अतिशय सम्मान से विरजानन्दजी को नमस्कार किया। वे निर्देश पाकर बड़े विनीत भाव से उनके समीप बैठे गये। विरजानन्दजी ने आगन्तुक से परीक्षा की रीति पर पहले थोड़ा सा कुछ पूछा। स्वामी दयानन्दजी के उत्तरों को सुनकर विरजानन्दजी ने कहा-''दयानन्दजी ! अब तक जो कुछ तुमने अध्ययन किया हैं उसका अधिक भाग अनार्ष ग्रन्थ हैं। ऋषि-शैली बड़ी सरल सुन्दर है परन्तु लोग उसका अवलम्बन नहीं करते। जब तक तुम अनार्ष पद्धति का परित्याग न करोगे तब तक आर्ष ग्रन्थों का महत्व और मर्म समझ न सकोगे।'' दण्डीजी ने फिर कहा कि आधुनिक अनार्ष ग्रन्थों के रचयिता कैसी प्रकृति के थे इसको सारस्वत नामक व्याकरण-ग्रन्थ की रचना की कथा से समझ सकते हो। अनुभूतिस्वरूप आचार्य एक दिन विद्वानों के साथ वाद में प्रवृत्त हो रहा था। बुढ़ापे के कारण उसके अगले दांत गिर गये थे। इसलिये वाद प्रसंग में 'पुंसु' पद के स्थान उसके मुख से अशुद्ध शब्द 'पुंक्षु' निकल गया। उपस्थित पण्डितों ने 'पुंक्षु' पद पर आक्षेप किया, परन्तु अपनी अशुद्धि स्वीकार करना तो दूर रहा, उसने नूतन ग्रन्थ की रचना करके 'पुंक्षु' पद सिद्ध करने का यत्न किया। यद्यपि उसका यह यत्न सफल न हुआ तो भी अनार्ष ग्रन्थों के कर्त्ताओं की प्रकृति प्रकट करने के लिये यह एक ही दृष्टान्त पर्याप्त है। यदि तुम मेरे समीप अध्ययन करना चाहते हो तो मनुष्य कृत ग्रन्थों को विस्मरण कर दो। पठन-पाठन में उनसे कोई भी काम न लो। स्वामी दयानन्दजी ने दण्डीजी के इस प्रथम आदेश को प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर लिया। दण्डीजी ने फिर यह भी कहा कि हम संन्यासियों को नहीं पढ़ाया करते। इसका कारण यह है कि उनके भोजन का यहाँ कोई प्रबंध नहीं। इस लिए पढ़ना आरम्भ करने के पहिले आपको अपने भोजन का प्रबन्ध अवश्य कर लेना चाहिये। निश्चिन्तता प्राप्त किये बिना अध्ययन नहीं हो सकता। स्वामी दयानन्दजी ने इस दूसरे कथन को भी सादर स्वीकार करते हुए कहा-''महाराज ! आप पढ़ाना आरम्भ कर दीजिए। भोजन के विषय में निश्चिन्तता, मैं थोड़े दी दिनों में लाभ कर लूंगा।''

कहते हैं, दण्डीजी सिद्धान्त कौमुदी के सम्पादक भट्टोजी दीक्षित्त पर इतने अप्रसन्न थे कि अपने विद्यार्थियों से उसके नाम पर जूते लगवाया करते थे, जिससे उनके मन में उसके लिए प्रतिष्ठा का लेश भी शेष न रह जाय और वे अष्टाध्यायी का पूरा सम्मान करने लग जायँ। इस आज्ञा का पालन पहले स्वामी दयानन्दजी से भी कराया गया और इसके पश्चात् उनका पाठ आरम्भ हुआ। दण्डीजी की प्रेरणा से सारे नगर से चन्दा करके स्वामी दयानन्दजी के लिए महाभाष्य की एक प्रति ३१) रुपये की मँगवाई गई।

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च।
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥

सारे संसार का कल्याण करने वाले उस परमपिता परमात्मा को बार-बार नमस्कार।

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध दिवस के पावन अवसर पर

हार्दिक शुभकामनाएं

दोआबा आर्य सीनियर सैकेंडरी स्कूल, नवांशहर

(स्थापित–1911)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (रजि.) गुरुदत्त भवन,
किशनपुरा चौक, जालन्धर द्वारा संचालित
अपने गौरवमय इतिहास को पुनर्जीवित
करने के लिये दृढ़ संकल्पिक
निरन्तर प्रगति की
ओर अग्रसर

विशेष आकर्षण

सुन्दर, विशाल भवन, भव्य पुस्तकालय, अत्याधुनिक कम्प्यूटर शिक्षा, शानदार परीक्षा परिणाम, अनुभवी तथा योग्य अध्यापक, नैतिक, सांस्कृतिक व धार्मिक शिक्षा, विशाल क्रीड़ा क्षेत्र, खेलों की आधुनिक प्रयोगशालाएं, समस्त भव्य सुविधाओं से परिपूर्ण

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये तुरन्त सम्पर्क करें।

सुरेन्द्र मोहन तेजपाल	ललित मोहन पाठक	ललित कुमार	राजेन्द्र सिंह गिल
प्रधान	उप प्रधान	मैनेजर	कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

ओ३म् इन्द्रायेन्द्रो परिस्त्रव।

ऋग्वेद 7,113,7

मेरा मन ज्योतिर्मान प्रभु की ओर प्रवाहित हो तथा परमानन्द की प्राप्ति करें।

महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस व दीपावली के पावन अवसर पर

हार्दिक शुभकामनाएं

बी.एल.एम.गर्ल्ज कालेज नवांशहर दोआबा

निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर

विशेषताएं

1. उच्च स्तर की पढ़ाई।
2. मेहनती व अनुभवी स्टाफ।
3. शिक्षा के क्षेत्र में उच्च स्थान।
4. हर प्रकार की आधुनिक सुविधाओं से युक्त।
5. शिक्षा में देशभक्ति व सांस्कृतिक गतिविधियों का समावेश।

❖❖❖

नये सत्र में अपनी लड़कियों के उज्जवल भविष्य के लिये उन्हें नैतिक शिक्षा व उच्च शिक्षा को प्राप्त कराने के लिये सम्पर्क करें।

डा.सी.एम.भण्डारी	विनोद भारद्वाज	मीनाक्षी शर्मा
प्रधान	सचिव	प्राचार्य

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापति।

मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा॥ (यजुर्वेद 32/5)

हे सर्वोत्कृष्टेश्वर! आप आनन्दस्वरूप और आनन्ददाता हैं, विज्ञानमय और विज्ञानप्रद हैं, सब संसार के अधिष्ठाता और पालन ऐश्वर्य दाता हैं, परमपवित्र और अनन्त बलवान हैं, सब के धारण पोषण करने वाले हैं, कृपा करके हम को ऐसी बुद्धि दें कि जिससे हम सर्वविद्या सम्पन्न हों, यह हमारी बारम्बार प्रार्थना है।

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध दिवस के पावन अवसर पर

हार्दिक शुभकामनाएं

आर.के. आर्य कालेज नवांशहर

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देख-रेख में निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर

शिवरात्रि के शुभ अवसर पर, प्रबन्धकर्तृ सभा के सदस्य, प्राध्यापकगण, प्रिंसीपल और विद्यार्थी सभी आर्य बन्धुओं व बहिनों को हार्दिक बधाई भेंट करते हैं।।

☆☆☆☆

नवांशहर के क्षेत्र में उच्च शिक्षा का सबसे बड़ा केन्द्र। खेलों का समुचित प्रबन्ध व खुले मैदान, धार्मिक, नैतिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान, चरित्र निर्माण पर विशेष बल।

☆☆☆☆

नये सत्र में अपने बच्चों के सर्वतोमुखी विकास के लिये, उनके चरित्र निर्माण के लिये, धार्मिक व नैतिक शिक्षा के लिये और उज्जवल भविष्य के लिये उन्हें ***आर.के. आर्य कालेज नवांशहर*** में प्रवेश करवायें।

देशबन्धु भल्ला एडवोकेट	सोहन सिंह	जे.के.दत्ता	एस.के. बारिया
प्रधान	उपप्रधान	सैक्रेटरी	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च।
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोधदिवस के पावन अवसर पर

हार्दिक शुभकामनाएं

डी.ए.एन.आर्ट एंड क्राफ्ट (A.C.T) कालेज नवांशहर

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देखरेख में

निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर

विशेषताएं

1. नवांशहर क्षेत्र में आर्ट्स एंड क्राफ्ट का एक मात्र कालेज
2. अनुभवी तथा ट्रेंड स्टाफ।
3. सुसज्जित मैदान।
4. शानदार पेटिंग सिखाने का प्रबन्ध।
5. सभी प्रकार की आधुनिक विद्याओं से युक्त।
6. बोर्डिंग का उचित प्रबन्ध
7. शत्-प्रतिशत् परीक्षा परिणाम।

नये सत्र में विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास की ओर विशेष ध्यान

प्रवेश के लिये सम्पर्क करें।

विनोद कुमार	बख्तावर सिंह	विपिन तनेजा	आशा शर्मा
प्रधान	**उपप्रधान**	**सैक्रेटरी**	**प्रिंसीपल**

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

नाप्राप्यमभिवांछन्ति नष्टं नेच्छन्ति शोचितुम्।
आपत्सु च न मुहयन्ति नराः पण्डित बुद्धय् ॥

जो मनुष्य प्राप्त होने के अयोग्य पदार्थों की कभी इच्छा नहीं करते अदृश्य व किसी पदार्थ के नष्ट भ्रष्ट हो जाने पर शोक करने की अभिलाषा नहीं करते और बड़े-बड़े दुःखों से मुक्त व्यवहारों की प्राप्ति में भी मूढ़ होकर नहीं घबराते, वे मनुष्य पंडितों की बुद्धि से युक्त कहाते हैं। (व्यवहारभानु)

– महर्षि दयानन्द

☆☆☆

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध दिवस के पावन अवसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

डब्ल्यू.एल. आर्य गर्ल्ज सी.सै.स्कूल नवांशहर

☆☆☆

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के संरक्षण में निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर

☆☆☆

1. *अनुभवी तथा उच्च शिक्षा प्राप्त स्टाफ।*
2. *नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा पर विशेष बल।*
3. *अच्छे परीक्षा परिणाम, सुन्दर भवन, हवादार कमरे।*
4. *आधुनिक विशेषताओं से युक्त पाठ्यक्रम में देश भक्ति व सांस्कृतिक गतिविधियों का समावेश।*

नये सत्र में अपनी कन्याओं के उज्जवल भविष्य और आदर्श शिक्षा के लिये सम्पर्क करें।

वीरेन्द्र सरीन	ललित शर्मा	ललित मोहन पाठक	प्रवीण मल्होत्रा
प्रधान	उपप्रधान	मैनेजर	कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ओ३म् ॥

न वा उदेवाः क्षुधमिद् वधं ददुः, उताशितमुपगच्छन्ति मृत्यवः।
उतो रयिः पृणतो नोपदस्यति, उतापृणन् मर्डितारं न विदन्ते॥ (ऋ. 10/117/1/11)

देवों ने न केवल भूख दी भूख के रूप में मौत दी है, अपितु खाते पीते अमीर को भी नाना प्रकार से मौत आती है और देने वाले की धन-सम्पत्ति क्षीण कभी नहीं होती अपितु जो दान न देने वाला है, वह कभी भी किसी सुख को प्राप्त नहीं करता अपितु दान देने वाला सुख को प्राप्त होता है।

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व शिवरात्रि पर्व के पावन अवसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

डा. आसानन्द आर्य माडल सी.सै.स्कूल नवांशहर

विशेषताएं

☆☆☆

1. *शिशुशाला से +2 तक नियमित कक्षाएं और सुयोग्य एवं प्रशिक्षित स्टाफ।*
2. *धार्मिक शिक्षा।*
3. *कम्प्यूटर शिक्षा।*
4. *हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम से पाठ्यक्रम का पठन-पाठन।*
5. *विशाल क्रीडा क्षेत्र।*
6. *सुन्दर भवन।*
7. *हरे-भरे वृक्ष।*
8. *उचित जल एवं विद्युत व्यवस्था।*
9. *हवादार कमरे आदि विशेषताओं से सम्पन्न है।*

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की छत्रछाया में उन्नति के पथ पर अग्रसर
नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये सम्पर्क करें।

इन्द्रदेव गौतम	जिया लाल शर्मा	अचला भल्ला	सतीश कश्यप
प्रधान	प्रबन्धक	डायरैक्टर	कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

तंमीडत प्रथमं यज्ञसाधं विश आरीराहुतमृंजसानम्

ऊर्जः पुत्रं भरतं सुप्रदातुं देवा अग्निं धारयन् द्रविणोदाम ॥ (ऋ. 1/7/3/3)

जो परमात्मा सब जगत् का आदिकारण, वेदविहित कर्मों से प्राप्त होने योग्य, सबका अधिष्ठाता तथा पूजनीय है और जिसको विद्वान लोग प्रकाश तथा नम्रता का देने वाला, जगत् का दु:ख हर्ता, धारण पोषणकर्त्ता, ज्ञान तथा क्रिया शक्ति आदि उत्तम पदार्थों का देने वाला मानते हैं, उसी की सब को स्तुति करनी चाहिये, अन्य की नहीं। (आर्याभिविनय)

- महर्षि दयानन्द

◆◆◆

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध दिवस के पावन अवसर पर

◆◆◆

हार्दिक शुभकामनाएं

◆◆◆

डी.ए.एन कालेज आफ एजुकेशन फार वूमैन, नवांशहर

❑ निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर ❑

विशिष्टताएं

सुयोग्य प्राचार्य व प्राध्यापकगण, बृहद पुस्तकालय, सांस्कृतिक गतिविधियां, **नैतिक व धार्मिक शिक्षा पर बल, कम्प्यूटर और होस्टल सुविधाएं उपलब्ध व** समस्त आधुनिक सुविधाओं से परिपूर्ण। नये सत्र के लिये अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिये सम्पर्क करें

◆◆◆

विनोद कुमार भारद्वाज	एस.के.बरूटा	डा. सरोज भल्ला
प्रधान	सचिव	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

राष्ट्र च रोह द्रविणं व चरोह (अथर्व. 13/1/34)

सुख के लिये राज्य और धन को बढाओ।

★★★

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध दिवस के शुभ अवसर पर

★★★

हार्दिक शुभकामनाएं

★★★

आर्य कालेज लुधियाना

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देखरेख में निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर

1. शहर के मध्य में स्थित।
2. अनुभवी व उच्च शिक्षा प्राप्त स्टाफ।
3. हवादार कमरे, खेलने के लिये खुला मैदान।
4. लड़के, लड़कियों के लिये पढ़ाई की अलग अलग व्यवस्था।
5. सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाओं से युक्त।
6. चरित्र निर्माण व नैतिक शिक्षा पर विशेष बल।
7. सभी तरह की विशेषताओं से युक्त पुस्तकालय व प्रयोगशाला।

नये सत्र में अपने बच्चों का उज्जवल भविष्य बनाने के लिये इस कालेज में प्रवेश करवायें।

सम्पर्क करें

देवेन्द्र नाथ शर्मा	विजय सरीन	डा. रमेश चन्द्र तेजपाल
प्रधान	सैक्रेटरी	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।

दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं, तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ॥20॥

भावार्थ- हे प्रभो! तेरा दिव्य शक्ति वाला जो मन जागते हुये का व सोते हुये का दूर दूर तक जाता है अर्थात् चिन्तन करता है, जो सभी ज्ञान-साधक इन्द्रियों का प्रधान ज्योति प्रकाशक है, वह मेरा मन आपकी कृपा से शुभ विचारों वाला होवे।

★★★

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व के शुभ अवसर पर

★★★

हार्दिक शुभकामनाएं

★★★

आर्य सीनियर सैकेण्डरी स्कूल लुधियाना

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देखरेख में निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर

विशेषताएं

1. समृद्ध स्वामी दयानन्द पुस्तकालय।
2. अनुभवी, लग्नशील, मेहनती, सुयोग्य, ट्रेंड स्टाफ
3. स्कूल में पानी की उत्तम व्यवस्था के लिये प्रबन्ध।
4. अच्छे परीक्षा परिणाम तथा गत वर्ष की अपेक्षा विद्यालय में छात्रों की संख्या में वृद्धि।
5. प्रति वर्ष विद्यार्थियों की भलाई व कल्याण के लिये एजुकेशनल टूर ले जाने का निर्णय।
6. आर्थिक अनियमितताओं को दूर करने के लिये प्रयासरत
7. प्राइमरी विंग के बच्चों के लिये खेलने की विशेष सुविधा।
8. खेलों के क्षेत्र में प्रथम आने वाले विद्यार्थियों के प्रोत्साहन के विशेष प्रबन्ध।
9. विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण तथा आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार व प्रसार के लिये स्कूल में धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध।

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये सम्पर्क करें।

मुनीष मदान
प्रधान

विनोद गांधी
मैनेजर

विजयपाल
कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

वेद शास्त्रों को पढ़ने वाला व्यक्ति निर्धन भी अच्छा है परन्तु शास्त्र के अध्ययन से रहित और आचरणहीन मनुष्य धनवान भी अच्छा नहीं। सुन्दर नेत्रों वाला फटे पुराने कपड़ों में भी सुन्दर लगता है परन्तु नेत्रहीन सोने के गहनों से सजा हुआ भी शोभित नहीं होता है।

★★★

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध दिवस के अवसर पर

★★★

हार्दिक शुभकामनाएं

★★★

आर्य गर्ल्ज सीनियर सै.स्कूल

पुराना बाजार, नजदीक दरेसी मैदान, लुधियाना

विद्यालय के विशेष आकर्षण

1. अंग्रेजी व हिन्दी मीडियम में शिक्षा।
2. उच्च शिक्षित अध्यापक वर्ग।
3. बढ़िया बोर्ड परीक्षा परिणाम।
4. खुले व हवादार कमरे।
5. सांस्कृतिक गतिविधियां।
6. समृद्ध पुस्तकालय
7. गरीब एवं योग्य छात्राओं को छात्रवृत्तियां व वर्दियों का प्रबन्ध।
8. कॉमर्स एवं कम्प्यूटर प्रशिक्षण का विशेष प्रबन्ध।
9. स्कूल में स्वच्छ जल के लिये फिल्टर्ज की व्यवस्था।
10. जरूरतमंद छात्राओं के लिये वर्दियों और स्वैटरस वितरण।
11. प्रतिवर्ष बच्चों की भलाई और कल्याण के लिये एजुकेशनल टूर ले जाने का प्रबन्ध।

नये सत्र में अपनी कन्याओं के उज्जवल भविष्य व सर्वांगीण विकास के लिये सम्पर्क करें।

सुशील मोदगिल	राजेश शर्मा	ज्योति किरण शर्मा
प्रधान	प्रबन्धक	कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु, शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।

शमभिशाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवा शं नो अप्याः ॥

भावार्थ- हे प्रभो! आपकी कृपा से दिव्य गुण कर्म स्वभाव वाले साधारण जन, विविध प्रकार के देने वाले दाता जन एवं द्युलोक, पृथिवी लोक और अंतरिक्ष लोक से सम्बन्ध दैवी शक्तियां हमारे लिये कल्याणकारी हों।

★★★

महर्षि दयानन्द के जन्म दिवस व बोध दिवस के पावन अवसर पर

★★★

हार्दिक शुभकामनाएं

दयानन्द पब्लिक स्कूल

दीपक सिनेमा रोड, लुधियाना

(पंजाब शिक्षा बोर्ड से मान्यता प्राप्त)

प्री-नर्सरी से दसवीं कक्षा तक इंग्लिश/ हिन्दी मीडियम, पंजाब पढ़ाने का उत्तम प्रबन्ध

विशेषताएं

1. अनुभवी एवं उच्च शिक्षित स्टाफ।
2. आर्ट्स,क्राफ्ट एवं कम्प्यूटर का समुचित प्रबन्ध।
3. चरित्र निर्माण व धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध।
4. शीतल पेय जल के लिये वाटर कूलर का प्रबन्ध।
5. विशाल एवं हवादार कमरे।
6. शहर के मध्य में स्थित।
7. बढ़िया फर्नीचर।
8. खुला मैदान।
9. शानदार परीक्षा परिणाम।

नये सत्र में प्रवेश के लिये सम्पर्क करें।

संत कुमार
प्रधान

सुनीता मलिक
प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

विद्या:- जिससे ईश्वर से लेके पृथिवी पर्यन्त पदार्थों का सत्य-विज्ञान होकर उनसे यथायोग्य उपकार लेना होता है, इसका नाम 'विद्या' है।

(महर्षि दयानन्द)

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व के शुभावसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

मालवा का शान्ति निकेतन

श्री लाल बहादुर शास्त्री आर्य महिला कालेज बरनाला

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देखरेख में निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर

विशेषताएं

+1 और +2 के साथ-साथ बी.ए. तृतीय वर्ष तक पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला से सम्बन्धित संस्था

1. Post Graduate Diploma in Computer Application.
2. Post Graduate Diploma in Dress Designing & Tailoring (both affiliated to Punjabi University Patiala) कोर्स भी चल रहे है। इस कालेज में पंजाबी, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, इक्नामिक्स, राजनीति शास्त्र, इतिहास, संगीत, फिलास्फी विषयों के साथ-साथ कम्प्यूटर, आफिस मैनेजमेंट, होम मैनेजमेंट, फाईन आर्ट्स के विषय भी पढ़ाये जा रहे हैं। पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला का केवल यह एक कालेज है जहां फैशन डिजाइनिंग का विषय भी पढ़ाया जाता है।

यू.जी.सी. स्कीम अधीन कई अन्य विषय/ कोर्स शुरू किये गए हैं।

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये सम्पर्क करें

☆☆☆

डा.सूर्यकांत शोरी	भारत भूषण मैनन एडवोकेट	केवल जिन्दल	डा.नीलम शर्मा
प्रधान	महासचिव	उपप्रधान	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

तीर्थ:- जितने विद्याभ्यास, ईश्वरोपासना,धर्मानुष्ठा[illegible] संग, ब्रह्मचर्य, जितेन्द्रियादि उत्तम कर्म हैं, वे सब 'तीर्थ' कहाते हैं क्योंकि इन करके जीवन दुखसागर से तर जा सकते हैं। (महर्षि दयानन्द)

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व के पावन अवसर पर

हार्दिक शुभकामनाएं

आर्य माडल स्कूल, बरनाला

विश्व गुरु स्वामी दयानन्द जी सरस्वती के पदचिन्हों पर चल कर अपना मानव जीवन सफल बनायें तथा राष्ट्र को सही दिशा दें।

■ विशेषताएं ■

1. योग्य, परिश्रमी और अनुभवी अध्यापक वर्ग।
2. प्रबन्धक समिति के शिक्षित और दूरदर्शी सदस्यों द्वारा पूर्ण सहयोग।
3. विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु विशेष ध्यान।
4. खेलों के साथ साथ सह पाठ्यक्रम क्रियाओं के प्रति विशेष ध्यान।
5. शिक्षण विकास की परीक्षा हेतु समयानुसार परीक्षाएं।

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिये उन्हें आर्य माडल स्कूल बरनाला में दाखिल करवायें। सम्पर्क करें

हरमेल सिंह जोशी	भारत भूषण मेनन	राजेश कुमार गांधी	उर्मिल सिंगला
प्रधान	*मैनेजर*	*सैक्रेटरी*	*प्रिंसीपल*

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

(महर्षि दयानन्द)

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस एवं बोध पर्व के

पावन पर्व पर

☆☆☆

गांधी आर्य सीनियर सैकेंडरी स्कूल बरनाला

☆☆☆

की ओर से सभी को हार्दिक शुभ कामनाएं।

स्कूल की मुख्य विशेषताएं :–

- सभी कक्षाओं के शत–प्रतिशत परिणाम।
- उच्च शिक्षित अध्यापक वर्ग।
- खुले तथा हवादार कमरे।
- वैदिक धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा पर विशेष बल।
- अन्य सह–क्रियाओं में छात्रों का रचनात्मक सहयोग।
- अनिवार्य कम्प्यूटर शिक्षा।
- खेलों का उचित प्रबन्ध।
- बिजली पानी का उचित प्रबन्ध। नये सत्र में बच्चों के दाखिला के लिये सम्पर्क करें।

प्रेम कुमार बांसल एडवोकेट प्रधान	भारत भूषण मैनन एडवोकेट उप प्रधान	संजीव शोरी मैनेजर
भारत मोदी सचिव		डा. एच.कुमार कौल डायरैक्टर

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

मुक्ति के साधनः- अर्थात् ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना का करना तथा धर्म का आचरण, पुण्य का करना, सत्संग, तीर्थ सेवन, विश्वास, सत्पुरुषों का संग, परोपकारादि सब अच्छे कामों का करना और सब दुष्ट कर्मो से अलग रहना है, ये सब 'मुक्ति के साधन' कहाते हैं। महर्षि दयानन्द

दयानन्द केन्द्रीय विद्या मंदिर, बरनाला

☆☆☆

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व के पावन अवसर पर हार्दिक बधाई

❒ निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर ❒

1. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के मार्ग दर्शन में बरनाला जिले में अग्रणी शिक्षा संस्था।
2. समय पालन, सामाजिक सहयोग, देश प्रेम, पारस्परिक सद्भाव तथा विश्वास, उत्तरदायित्व की भावना, अनुशासन तथा धर्म और संस्कृति के प्रति आदर का पाठ्यक्रम में समावेश।
3. कम्प्यूटर शिक्षा, संगीत शिक्षा, क्रीड़ा प्रतियोगिताएं, शैक्षणिक भ्रमण, समृद्ध प्रयोगशाला, समृद्ध पुस्तकालय, खुले हवादार कमरे, वाटर कूलर, जैनरेटर तथा प्राथमिक सहायता की सुविधा।

☆☆☆

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिये सम्पर्क करें

☆☆☆

भारत भूषण मैनन — प्रधान
भारत मोदी — उप प्रधान
पवन सिंगला — उपप्रधान
बसन्त शोरी — मैनेजर
संजीव शोरी — सैक्रेटरी
वन्दना गोयल — कार्यकारी प्रिंसीपल
अनीता मित्तल — डायरैक्टर

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं, शृंणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः शतं, अदीनाः स्याम शरदः शतं,भूयश्च शरदः शतात् ॥१॥

भावार्थः हे प्रभो आप सबके मार्ग दर्शक हैं, विद्वानों के परम हितकारक हैं, आप तेजोमयी शक्ति हैं- हम सौ वर्ष तक आपको ज्ञान चक्षुओं से देखते रहें, सौ वर्ष तक आपके उपदेश को सुनते रहें, और दूसरों को सुनाते रहें, सौ वर्ष तक तथा इससे भी अधिक समय तक आपकी कृपा से हम स्वस्थ जीवन बिताएं और जन्म जन्मांतर तक आपका यश देखते सुनते रहें।

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व के शुभावसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

आर्य गर्ल्ज सी.सै.स्कूल बठिंडा

बालिकाओं का उज्जवल भविष्य बनाने वाली एक श्रेष्ठ संस्था

इसके मुख्य आकर्षण हैं:-

1. नगर के मध्य में स्थित
2. खुले हवादार कमरे।
3. कक्षा प्रथम (पहली) से +2 (आर्टस व कॉमर्स) तथा मैडीकल, नॉन मैडीकल तक शिक्षा में प्रति वर्ष शत-प्रतिशत परीक्षा परिणाम।
4. बच्चों को नैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक व राष्ट्रीय शिक्षा देकर दृढ़ चरित्र-निर्माण व देशभक्त बनाने का प्रयास।
5. जरूरतमंद बच्चों के लिये पुस्तक व कोष व अन्य तरीकों से आर्थिक सहायता।
6. अनुशासन पर विशेष ध्यान।
7. विभिन्न उपायों से बच्चों के सर्वांगीण विकास पर सतत जोर देना।
8. आधुनिक लैब, साईंस ग्रुप +1, +2 के लिये उपलब्ध।

इस प्रकार अनुभवी प्रबन्धक समिति, सुयोग्य प्रधानाचार्य व प्रशिक्षित स्टाफ के समुचित नेतृत्व व मार्ग दर्शन में दिन-प्रतिदिन उन्नति के सोपानों को पार करता हुआ यह विद्यालय आपके बच्चों का स्वर्णिम भविष्य निर्मित करने के लिये नगरवासियों की सेवा में प्रस्तुत।

"नये सत्र में अपनी कन्याओं को प्रवेश दिलाएं, उन्हें योग्य, चरित्रवान व देशभक्त बनाएं।"

अनिल कुमार	निहाल चंद एडवोकेट	सुषमा कुमारी
प्रधान	प्रबन्धक	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म ॥

सत्पुरुषः सत्यप्रिय, धर्मात्मा, विद्वान, सब के हितकारी और महाशय होते हैं, वे 'सत्पुरुष' कहाते हैं।

(महर्षि दयानन्द)

☆☆☆

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व ऋषि बोध उत्सव के पावन अवसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

आर्य माडल सी.सै.स्कूल, बठिंडा

विशेषताएं:

Ph.No. 0164-2238328

1. नगर के मध्य स्थित।
2. योग्य, सुशिक्षित तथा अनुभवी स्टाफ।
3. विद्यार्थियों के सर्वतोमुखी विकास पर विशेष ध्यान।
4. शानदार परीक्षा परिणाम
5. नगर में निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर
6. प्रदूषण व ध्वनि रहित जेनरेटर, आर.ओ.पानी, आदि की मूलभूत आवश्यकताओं की समुचित व्यवस्था

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये सम्पर्क करें।

☆☆☆

पी.डी.गोयल एडवोकेट
प्रधान

रमेश कुमार गर्ग
उप प्रधान

गौरी शंकर
मंत्री

विपिन कुमार गर्ग
प्रधानाचार्य

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

जीव का रहस्यः- जो चेतन, अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुख और ज्ञान-गुण वाला तथा नित्य है, वह 'जीव' कहाता है।

(महर्षि दयानन्द)

ऋषि जन्म दिवस व बोध दिवस के पर्व पर सभी आर्य बन्धुओं और बहनों को स्कूल की प्रबन्धक समिति, प्रधानाचार्या एवं समस्त अध्यापकगण की ओर से

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

आर्य संस्कृति की गरिमा को समर्पित संस्था

आर्य गर्ल्ज हाई स्कूल एवं वैदिक कन्या पाठशाला

औहरी चौक, बटाला

संस्था के विशेष आकर्षण

1. छात्राओं के सर्वांगीण विकास का जाना-माना शिक्षा संस्थान।
2. धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा का प्रबन्ध।
3. योग्य उच्चतम शिक्षा प्राप्त निष्ठावान तथा अनुभवी अध्यापक।
4. कम्प्यूटर लैब का उचित प्रबन्ध।
5. पुस्तकालय की सुविधा।
6. साफ-सुथरे उच्चस्तरीय कमरे।
7. गर्ल्ज गाईड तथा बैंड व्यवस्था।
8. सांस्कृतिक आधार।
9. बिजली के पंखे तथा शीतल पेयजल का प्रबन्ध।
10. शत-प्रतिशत परीक्षा परिणाम।
11. नये सत्र में अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिये सम्पर्क करें।

निरन्तर प्रगति की ओर नारी उत्थान में संलग्न संस्था

प्रविन्द्र चौधरी	विजय अग्रवाल	सोनिया सच्चर
प्रधान	मैनेजर	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

पुरुषार्थ:-अर्थात् सर्वथा आलस्य छोड़ के उत्तम व्यवहारों की सिद्धि के लिये मन, शरीर,वाणी और धन से जो जो अत्यन्त उद्योग करना है, उसनको 'पुरुषार्थ' कहते हैं। (महर्षि दयानन्द)

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध पर्व के पावन अवसर पर

हार्दिक शुभकामनाएं

श्रीराम आर्य सी.सै.स्कूल पटियाला

(Affiliated to P.S.E.B)

प्रमुख विशेषताएं

1. शत प्रतिशत बोर्ड परिणाम।
2. सुयोग्य और अनुभवी स्टाफ।
3. शिक्षा का आधुनिक ढंग।
4. हिन्दी, अंग्रेजी व पंजाबी माध्यम।
5. उच्च शिक्षा, कम शुल्क।
6. प्राकृतिक वातावरण।
7. खुले व हवादार कमरे।
8. बड़ा खेल का मैदान।
9. नैतिक तथा धार्मिक शिक्षा पर विशेष ध्यान।

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये सम्पर्क करें।

डा. वीरेन्द्र कौशिक	अश्विनी मेहता	चन्द्रमोहन कौशल
प्रधान	मैनेजर	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

अविद्या:- जो विद्या से विपरीत है, भ्रम, अंधकार और अज्ञानरूप है, इसलिये इसको 'अविद्या' कहते हैं।

(महर्षि दयानन्द)

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व शिवरात्रि पर्व के पावन अवसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

☆☆☆

आर्य गर्ल्ज सी.सै.स्कूल पटियाला

❐ *आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देख-रेख में निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर* ❐

संस्था के विशेष आकर्षण

1. पंजाब सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त।
2. नगर के मध्य में स्थित
3. 10+2 तक की शिक्षा (आर्ट्स व कामर्स ग्रुप) तदर्थ नये भवन के ब्लाक का विशेष प्रबन्ध।
4. पुस्तकालय, प्रयोगशाला एवं हवादार कमरों वाली इमारत।
5. बिजली,पानी आदि की मूलभूत आवश्यकताओं की समुचित व्यवस्था।
6. राष्ट्र प्रेम, धर्म व संस्कृति का आदर, भाइचारे की भावनाओं का विकास कर भारतीयता पर आधारित चरित्र निर्माण पर विशेष बल
7. आर्य समाज के दस नियम, गायत्री मंत्र, नैतिक व धार्मिक शिक्षा की परीक्षाओं की विशेष व्यवस्था।
8. कम्प्यूटर, संगीत व गृह-विज्ञान की शिक्षा का विशेष प्रबन्ध।
9. स्कूल के अति उत्तम शत-प्रतिशत परीक्षा परिणाम।
10. रैडक्रास, होम नर्सिंग, गर्ल गाईड की शिक्षा देकर विद्यार्थियों में सहायता का भाव उत्पन्न करना।
11. प्रधानाचार्य अनुभवी प्रतिभावान, सुशिक्षित व नगर में प्रतिष्ठित सुचारू प्रबन्ध कमेटी के योग्य निर्देशन में

अपने उच्च शिक्षित पूर्णतया योग्य अनुभवी स्टाफ के साथ मिल कर सफलतापूर्वक पाठशाला का संचालन कर रही है।

नये सत्र में अपने बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिये सम्पर्क करें।

सोमप्रकाश	**शैलेन्द्र मेहरा**	**किरण जिन्दल**
प्रधान	प्रबन्धक	प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

परिमाग्ने दुश्चरितादवाधस्व मा सुचरिते भज।

यजु. 4/28

हे प्रकाशमय प्रभो ! मुझे दुराचार से रोको और सच्चरित्र में प्रेरो

***

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस एवं बोध पर्व के शुभ अवसर पर

***

हार्दिक शुभकामनाएं

***

आर्य कन्या सी.सै. स्कूल, बस्ती नौ, जालन्धर

***

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब व आर्य विद्या परिषद के निर्देशन में चलता हुआ निरन्तर उन्नति कीओर अग्रसर

विशेषताएं

विशाल भवन, हवादार कमरे, उच्च शिक्षित व
शिक्षा को समर्पित स्टाफ, कन्याओं के
विकास के लिये निरन्तरकार्यरत,
नैतिक शिक्षा पर
विशेष बल।

***

नए सत्र में अपनी कन्याओं के उज्जवल भविष्य
और आदर्श व उच्च शिक्षा के लिये
सम्पर्क करें।

ज्योति शर्मा	सुधीर शर्मा	मीनू कपूर
प्रधान	प्रबन्धक	कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

ओ३म् अस्माकमिन्द्रः स्मृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्तु जयन्तु।
अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्त्वस्माकं उ देवा अवता हवेषु॥

(साम. अध्याय 22, खंड 4, मंत्र 2)

भावार्थः वीरों के बल से विजयी हम, फहरावें जय कीर्ति ललाम। देव हमारे धरती तल पर, प्राण पसारे जय वरदान। अमर शहीदों के पथ पर चल कर शान्ति का करें, प्रसार, शक्ति हमें दो भगवन ऐसी, वेद धर्म का हो विस्तार।

❖❖❖

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस एवं बोध पर्व के शुभ अवसर पर

❖❖❖

हार्दिक शुभकामनाएं

आर्य सी.सै.स्कूल बस्ती गुजां, जालन्धर

❖❖❖

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब व आर्य विद्या परिषद के निर्देशन में चलता हुआ निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर

विशेषताएं

1. विशाल भवन।
2. खेल के मैदान।
3. हवादार कमरे।
4. शिक्षा को समर्पित अध्यापक वृन्द।
5. अहर्निश छात्र वर्ग के विकास के लिये कार्यरत।

अपने लड़के व लड़कियों को धार्मिक शिक्षा दिलवाने के लिये
शिक्षा शास्त्री बनाने के लिये, सर्वांगीण विकास के लिये
तथा उनका उज्ज्वल भविष्य बनाने के लिये
आर्य सीनियर सैकेंडरी स्कूल, बस्ती गुजां
जालन्धर में प्रथम श्रेणी से 10+2
तक की पढ़ाई के लिये
प्रवेश करवाएं।

सरदारी लाल आर्य — प्रधान

विशाल पुरुथी — मैनेजर

श्रीमती सारिका — कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

पंडितः- जो सत् असत् को विवेक से जानने वाला धर्मात्मा, सत्यप्रिय, विद्वान और सब का हितकारी है उसको पंडित कहते हैं। —महर्षि दयानन्द

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस एवं बोधपर्व के पावन अवसर पर

***

हार्दिक शुभकामनाएं

***

डी.एन.माडल सी.सै.स्कूल मोगा

❒ विशेषताएं ❒

1. प्रशिक्षित एवं अनुभवी स्टाफ।
2. सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाओं से युक्त।
3. कम्प्यूटर कक्षाओं, पुस्तकालय एवं समृद्ध प्रयोगशालाओं का उत्तम प्रबन्ध।
4. गत वर्ष की उज्जवल उपलब्धियों, शैक्षणिक श्रेष्ठता का ज्वलंत प्रमाण।

उच्च स्तरीय शिक्षा, सांस्कृतिक गतिविधियों और राष्ट्रीय निर्माण में क्षेत्र की सर्वश्रेष्ठ संस्था।

सी.बी.एस.ई. दिल्ली द्वारा

मान्यता प्राप्त

निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर

सुदर्शन शर्मा	योगेश गोयल	अश्विनी कुमार शर्मा
प्रधान	उप प्रधान	संयुक्त सचिव
डी.एम.कालेज प्रबन्धक समिति	डी.एम.कालेज प्रबन्धक समिति	डी.ए कालेज प्रबन्धक समिति
मोगा	मोगा	मोगा

thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव॥ (यजु. 30/3)

(सवित) हे संसार के उत्पन्न करने वाले, संसार पर शासन करने वाले, संसार को शुभ प्रेरणा देने वाले, (देव) दिव्यगुणयुक्त परमेश्वर! (विश्वानि) सब (दुरितानि) बुराईयों को, दुरवस्थाओं को (परा+सुव) दूर कीजिए। (यत्भद्रम्) जो भद्र [है] (तत् नः) वह हमें (आसुव) दीजिए।

महर्षि दयानन्द जन्म दिवस व बोध उत्सव के पावन अवसर पर

☆☆☆

हार्दिक शुभकामनाएं

डी.एम कालेज मोगा

❒ *आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की देख-रेख में निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर* ❒

संस्था के विशेष आकर्षण

1. प्रशिक्षित एवं अनुभवी व मेहनती स्टाफ।
2. पढ़ने के लिये नव सुविधाओं से युक्त कमरे।
3. गत वर्षों की उज्जवल उपलब्धियां शैक्षणिक श्रेष्ठता का ज्वलंत प्रमाण।
4. मोगा के क्षेत्र में प्रतिष्ठता प्राप्त कालेज।
5. विद्यार्थियों के सर्वतोमुखी विकास पर विशेष बल।
6. चरित्र निर्माण व नैतिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान।
7. हर प्रकार की आधुनिक सुविधाएं।

प्रवेश के लिये सम्पर्क करें

सुदर्शन शर्मा प्रधान	**योगेश गोयल** उपप्रधान
अश्विनी कुमार शर्मा ज्यायंट सैक्रेटरी	**एस. के. शर्मा** कार्यकारी प्रिंसीपल

thearyasamaj.org

वेद का ध्वज लहलहाए

स्वर्ण दिन शिवरात्रि का है देश के इतिहास का,
मनुजता के शुभ पट पर मनुजता सुविकास का!

जागरण का नाद इसने ही किया था देश में,
चेतना मय शक्ति नव ले, नवलतम् परिवेष में!

सत्य शिव की खोज की नव लालसा इस दिन जगी,
अज्ञान की निमित्ताश्रित खलु भावना इस दिन भगी!

इस दिवस शिव अर्चना में मूल शंकर व्यस्त था,
उपवास आदिक पालने में पूर्ववत् अभ्यस्त था!

रात्रि के चढ़ते चरण में, सो रही जब सृष्टि थी!
तत्क्षण गयी शिवलिंग पर वह मूलशंकर दृष्टि थी!

मूषको ने ईश ऊपर क्लान्त सा क्रूख मचाया,
मूलशंकर के हृदय में, ज्ञान ज्योतिर्मय जगाया!

सत्य शिव अन्वेषणा का सुदृढ़तम अनुराग जागा,
मेदनी पर जागरण का, मनुजता का भाग्य जागा!

भरत भू का भ्रमण करके, ज्ञान वेदों का जगाया,
मूलशंकर विश्व का प्रिय, ऋषि दयानन्द था कहाया!

जड़ सदृश सोयी मनुजता में भरी नवचेतना,
होने लगी वेदाभि भूषित सत्य शिव की अर्चना!

उन्नयन कर सत्य पथ का वेद का बनकर पथिक,
आर्य संस्कृति की सुगरिमा कर दिया भू पर अधिक!

मुक्ति का नव मन्त्र उसने ही भरत भू को दिया,
स्वाधीनता का मूल्य युवकों के हृदय में भर दिया!

भूमि मण्डल पर पुनः आलोक लाने के लिए,
की 'आर्य समाज' स्थापना तम को हटाने के लिए!

व्याप्त महि मण्डल तिमिर जो, नष्ट होवे मूल से,
वेद का ध्वज लहलहाए, अवनि अम्बर कूल से!

कण्वादि ऋषियों का निवेदन फिर से धरा को प्राप्त हो,
सत्य पथ अनुगामिनी आभा धरा पर व्याप्त हो!

ऋषि राज द्वारा हम बताएं मार्गों पर चल सके,
वेदानुगामी बन सभी कल्याण जग का कर सकें।

thearyasamaj.org

रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17 आर्य मर्यादा साप्ताहिक आर. नम्बर 26281/74

॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज के नियम

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ।